अध्यात्म विनोद



खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन

ॐ तत्सत्

अध्यात्मविनोद ।

जिसमें

योगाभ्यास मेस्मेरिज्म और वेदांतका विषय अर्थात् आत्मा क्या है संसार क्या है मरनेके बाद क्या होता है शरीरस्थ षोडशाधार षट्चक्रोंका वर्णन प्राणायाम तथा सिद्धियां प्राप्त करनेकी विधि अनहद शब्द-सुननेका क्रम अधिक कालजीवित रहनेका अभ्यास कुछ काल पहिलेसे शरीरत्याग होनेका ज्ञान अचला पृथ्वी प्रमाणसहित दिनमान जाननेका क्रम पितरोंको तर्पणका जल किस प्रकारसे मिलता है क्षत्री शब्द खत्री-शब्दकी ऐक्यता इत्यादि विषय वर्णित हैं.

जिसको

श्रीक्षत्रीवंशोद्भव खत्रीशासने टंडन् लाला धूमामलजी तस्यात्मज गंगाधर वर्म्मा हरदोई अवधदेश निवासीने स्वानुभव तथा बडे परिश्रमसे संग्रह किया ।

मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संस्करण- सन् १९९८ सम्वत् २०५५

मूल्य १२ रुपये मात्र

Printed by Shri Sanjay Bajaj for M / s Khemraj Shrikrishnadass proprietors Shri Venkateshwar press Mumbai 400 004. at their Shri Venkateshwar press, 66, Hadapsar Industrial Estate, Pune-411013.

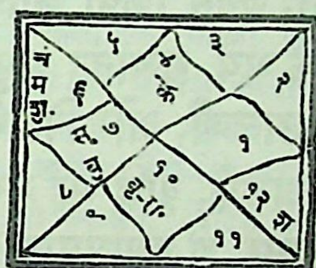
॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अचिंताव्यक्तरूपाय निर्गुणाय गुणात्मने ॥
समस्तजगदाधारमूर्त्तये ब्रह्मणे नमः ॥ १ ॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ॥
गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ २ ॥

ग्रन्थकर्त्ताकी जन्मकुंडली ।

सम्वत् १९३९ कार्तिक कृष्णा ।१२ बुधेष्टम् ४१ । १९ उत्तराफाल्गुनीनक्षत्रे चतुर्थचरणे जन्म ।

जन्माङ्गम्





श्रीगणेशाय नमः ।

ग्रन्थकर्त्ताका वंशादिवर्णन ।

सुमिरूं गणपति शारदा, गौरी शंकरनाथ ।
राम कृष्ण सिय राधिका, गुरुचरणन धरि माथ ॥ १ ॥
सूर्यादिक खेचर सकल, ब्रह्मादिक सुरजान ।
कृपादृष्टि दाया करहु, निजकुल कहौं बखान ॥ २ ॥
श्रीक्षत्रीवंशोद्भव, टंडन कुलके चन्द ।
पंजाबराय नामसे, जगमें कियो अनन्द ॥ ३ ॥
पुत्र चतुर जिनके भये, सुखानंद प्रभुलाल ।
श्रीयुत शिवजी लालजी, और बिहारीलाल ॥ ४ ॥
द्वै सुत शिवजीलालके, वृद्धि भई मर्य्याद ।
ललतराय अरु दूसरे, थे दुर्गाप्रसाद ॥ ५ ॥
ललतरायके पुत्र थे, चाहूलाल सुजान ।
तिन सुत धूमामलभये, विद्यायुत गुणवान ॥ ६ ॥
लालाधूमामलतनय, द्वै उपजे आनन्द ।
श्रीयुत राजारामजी, गंगाधर लघुनन्द ॥ ७ ॥
शहर शाहजहांपूरमें, लालाकूंचाठाम ।
अब हरदोईमें रहत, गंगाधर मम नाम ॥ ८ ॥
योग क्रिया अनुभवसहित, संग्रह करौं प्रमोद ।
लघु पुस्तकको नामधरि, श्रीअध्यात्मविनोद ॥ ९ ॥

वर्ष तीन षट्शनिअंकशशि, १९६३ राधाकृष्णसुमास ।
सूर्यतनय दशमीसहित, पुस्तक कीन प्रकाश ॥१०॥
संग्रह जो कछु किया है, अपनी मति अनुसार ।
भूल कदाचित होय कहुँ, गुरु जन देउ सुधार ॥ ११ ॥

इस योग विद्याका दिन बदिन लोप होता गया यहांतक कि इस समय खोज करनेसे बहुत कम इस विद्याके जाननेवाले मिलेंगे मैंने बडे परिश्रमसे उस विद्याकी खोज की जो कुछ मैंने अबतक इस विद्याके विषयमें जाना है उसको संक्षेप रीतिसे इस पुस्तकमें प्रगट करूंगा इससे प्रथम मुझको ज्योतिष विद्या जाननेमें अत्यंत चाहना हुई थी फिर मैंने ज्योतिष विद्याकी खोज की उस विद्यासे पंचांगका बनाना तथा जन्मपत्रसे फलादिक कहना सीखा और ज्योतिष विषयकी तीन पुस्तकें छपवा कर प्रकाश करवा दीगई हैं एक ज्योतिष कल्पद्रुम भाषा जो लखनऊ चौकवानवाली गलीमें पंडित ज्वालाप्रसाद श्यामसुंदर प्रोहित वैद्यजीके यहांसे मिलती है, दूसरी पञ्चांगरत्नावली नामक जो लखनऊ प्रिंटिंग प्रेसमें मेनेजर पंडित रामरत्नजी वाजपेयीके यहांसे मिलती है, तीसरी पुस्तक ग्रहलाघव सारिणी भाषा उदाहरण सहित जो श्रीवेंकटेश्वर प्रेस बंबईसे मिलती है मेरा कहनेका तात्पर्य यह है कि विना शौकके कोईभी विद्या नहीं आती है विश्वास और रुचिकी अत्यंतावश्यकता है प्रथम तौ युक्तियोंका मालूम होनाही दुर्लभ है, अगर तरकीब मालूमभी हुई और उसका अमल न किया जावे तौभी कुछ फल नहीं हो सकता है, बहुतसे महाशय कहा करते हैं कि औरको बतलाते हैं आपभी कुछ करसक्ते हैं कारण कि अभ्यास नहीं करनेसे कुछ नहीं करसक्ते, क्योंकि मैं अनेक प्रकारकी युक्तियोंको जानताहूं परन्तु उन क्रियाओंका अभ्यास न करनेसे कुछ फल प्राप्ति नहीं करसक्ता वास्तवमें उन क्रियाओंका जाननाही कठिन है इसहेतु मैं उन क्रियाओंको इस पुस्तकमें लिखूंगा।

अथ अध्यात्मविनोद प्रारंभ.



हरएक मनुष्यके शरीरमें गुप्तरूपसे शक्तियाँ प्रकाश कररही हैं एक विद्युत् शक्ति जिसको बिजली कहते हैं सो दहिने और सामने भागसे हो निकलती और वाम पीछे अंगसे होकर प्रवेश करती रहती है; दहिने हाथसे जिस चीजको पकडे रहो उसमें होकर बिजली निकलती रहेगी और बांये हाथसे जिस वस्तुको पकडे रहे उस वस्तु होकर बिजली शरीरमें प्रवेश अर्थात् उस वस्तुका गुणभी शरीरमें प्रवेश होता रहेगा इत्यादि एकशक्ति नेत्रोंमें और एक शक्ति ध्यानमें और एक शक्ति श्वासमें केवल इनही चार शक्तियों द्वारा अभ्यास करनेसे बहुतसे अद्भुत् कार्य होसक्ते हैं और मुक्तभी होसकते हैं मेस्मेरिजम नामसे जो विद्या प्रचालित होरही है प्रथम हम उसीके विषयमें लिखते हैं । किसी लडके या लडकीको अपने सामने बिठलाकर अपने दाहिने हाथकी अंगुलियोंकी फुनगी उसके बायें हाथकी अंगुलियोंकी फुनगीसे और अपने बायें हाथकी अंगुलियोंकी फुनगीको उसके दाहिने हाथकी अंगुलियोंकी फुनगीसे मिलाकर आरामसे दोनों बैठकर टकटकी लगाकर नेत्रों द्वारा परस्पर देखते रहो अर्थात नेत्रोंको परस्पर मिलाकर देखते रहो स्थिर चित्त होकर उस समय सब तरहका शोच फिक्र मनसे छोडकर दृढ चित्त होकर देखनेसे थोडी देर बाद उसके मेस्मेरिक आने लगेगी पलकें स्वयं बंद होजावेंगी जब पलकें बंद होजावें तब धीरे धीरे अपने हाथोंको हटाकर सीधे पास देउ अर्थात् अपने दोनों हाथोंको सीधा कर अंगूठेकी तरफसे दोनों हाथ मिलाकर अंगुलियोंको फैलाकर उसके मस्तकसे लेकर धीरे धीरे उसकी नाभितक हाथोंको लाकर फिर मुट्ठी बंद करके एक बगलकी तरफसे बंद मुट्ठीयोंको फिर उसके मस्तकपर लेजाकर खोलकर फिर पूर्वोक्त वारंवार ऐसा करनेको सीधे पास कहते हैं परंतु पास देनेके समय इतना ध्यान रहे कि अपने हाथ उसके शरीरमें न छूजावे ।किंतु शरीरसे दूरभी न रहैं ।

पास देनेसे निद्रा और गाढी होवेगी जब निद्रा गाढी होजावे तब उसका नाम लेकर उसके मुखके पास अपना मुख करके पुकारो कि कहां हो तब वह उस हालत (अवस्था) में जहां होगा बतलावेगा कि मैं अमुक स्थानमें अमुक देख रहाहूं फिर जहां कहीं भेजकर खबर मंगाना हो मंगालेवे हां अगर जहांके जानेसे वह इन्कार करे वहां हर-गिज २ मत भेजो वरन् नुकसान उठा तो इस तरह बेहोश करनेकी बहुतसी क्रियायें हैं परंतु दो तीन विधि मैं और लिखताहूं बेहोश करने-की दूसरी विधि । जिसको बेहोश करना चाहो उसको अपने सामने बैठाकर टकटकी लगाकर परस्पर देखते रहो और सीधे पास बराबर देते रहो थोडी देरमें निद्रा आने लगेगी। तीसरीविधि । जिसको बेहोश करना चाहो उसके सामने उत्तम चित्र या चमकीली चीज या दर्पणादि कुछ ऊँचेपर रखकर कहो कि स्थिर ध्यान लगाकर इसको देखते रहो और तुम उसको दृढचित्तसे देखते रहो थोडी देरमें निद्रा आजा-वेगी । जरूरी बातें । जिसको बेहोश करना हो उससे कुछ शत्रुताई न हो और स्थान एकांत विघ्नरहित हो तुम्हारा ध्यान यह रहै कि मेरी शक्तिद्वारा इसको निद्रा आवे और उसका ध्यान यह रहै कि इनकी शक्तिद्वारा मुझको निद्रा आवे । बतौर तमाशे या पैसा पैदा करना या पापकर्म करनेके निमित्त कभी मत करना चाहिये जबतक बेहोश न होने लगे बराबर अभ्यास करते रहो या दूसरे लडकेको बैठाया करो क्योंकि बाज बाजपर इसका असर बहुत जल्द, बाजपर देरमें, बाजपर असर बिल्कुल नहीं होता है ।

होशमें करनेकी तरकीब । जब होशमें करना हो तब उल्टे पास देना चाहिये अर्थात् अपने हाथोंकी हथेलियोंको अपने सामने करके छंगुनियांकी तरफसे अंगुलियोंको सीधा फैलाकर मिला लेवे फिर नाभिस्थानसे अंगुलियोंको फैलाकर मस्तकतक लेजाकर दोनों मुठि-योंको बंद करके एक बगलकी तरफसे लाकर फिर नाभिस्थानमें मुट्ठी खोलकर पूर्वोक्त बारंबार करनेको उल्टे पास कहते हैं। थोडी देर बाद

होशमें आजावेगा अगर देर होजावै तौ घबडाना नहीं चाहिये क्योंकि अगर तुम घबडाओगे तौ तुमारे दिलका असर तत्काल उसके दिल-पर पहुंचकर उसकाभी दिल घबडाने लगेगा । पानीको मेस्मेराइज करके उसकी पलकोंको धोदेवै अथवा अपने दाहिने हाथके अंगूठेसे उसकी दोनों भौंओंके मध्य नासिकाकी जड होकर बतौर तिलक कर-नेके दबाकर बारबार करनेसे अथवा नाककी तरफ पंखा धीरे धीरे चलनेसे होशमें आ जावेगा ऐसी निद्रा स्वयं छूट जाती है चौबीस २४ घंटेके दरमियान स्वयं होशमें आजाता है ।

बेहोश हुआ जो साधक है उसकी आत्मासे दूर २ की खबरें और दूसरेके शरीरके भीतरका रोगादि गुप्तविषय जाना जाताहै ऐसी हाल-तमें साधकके कपालपर चिठ्ठी या पुस्तक लगा देनेसे पढ सकता है जो विद्या कि वह जानता हो और दूसरेके अंगका कपडा उसको थंमा देनेसे उसकाभी हाल बता सकता है और दिनप्रति अभ्यास करनेसे साधकमें ऐसी शक्ति हो जाती है कि वह त्रिकालदर्शी अवस्था प्राप्ति करसक्ता है और कभी ऐसाभी होजाताहै कि किसी मृतक पुरुषकी आत्मा उसके शरीरमें प्रवेश करके अपना हाल कहती तथा प्रश्नोत्तर करती है इत्यादि और स्वयं अभ्यास करके स्वयं इस अवस्थामें पहुंच सक्ता है स्वयं अभ्यास करनेकी यह रीति है कि एकांत स्थानमें संकल्प विकल्परहित आंनदसे बैठकर पीठकी तरफ तकिया लगाकर एक बडा दर्पण अपने सामने कुछ ऊंचा रखकर अपने मुखकी आंखोंको या आंखकी पुतलियोंमें अपने मुखको ध्यान लगाकर रोज देखा करे और जो देश (स्थान) देखा हुआहो उसका ख्याल करे कि अमुक देशमें हूं परतु प्रथम यह कहलिया करे कि होशमें आने-पर सब देखा हुआ चारित्र याद रहे ऐसा बराबर करनेसे निद्रासी आजाया करेगी और दूर २ की खबर ला सकेगी फिर जैसा अधिक अभ्यास बढा लेवैगा वैसा कार्य कर सकैगा ।

सूक्ष्म शरीरसे काम लेनेकी विधि । रात्रिको सब कामसे निश्चिन्त

होकर सोनेका समय एकाग्रचित्त होकर यह ध्यान करै कि मैं अमुक देशमें पहुंच जाऊँ पहिले तो कुछ रोजतक कुछभी नहीं ज्ञात होगा कि वास्तवमें मैं अमुक देशमें गया था अमुकमित्रसे मिलना इत्यादि अभ्यास बढानेसे मालूम होगा कि मैं अमुक स्थानमें गया और अमुक मित्रसे मिलाथा इत्यादि अभ्यास बढानेसे सभी कुछ होसकता है फिर अपने सोनेके कमरेमें एक मेजपर सादा कागज और एक पेन्सिल और एक लैम्प रखकर सोते समय यह ध्यान किया करै सूक्ष्म शरीर द्वारा अमुक बात लिखूंगा फिर किसी दिन उस सादे कागजपर अमुक बात लिखी हुई मिलेगी अपने हस्ताक्षर सम होंगे फिर जिस २ बातका अभ्यास किया जावे उस २ बातको पूरा करसक्ता है ध्यानशक्ति जितनी स्थिराचित्तमें होगी उतनी उतनी जल्दी सिद्धि होगी, अभ्यासको छोडना नहीं चाहिये, फल अवश्य होवेगा। जल्दी नहीं करना चाहिये। अब हम केवल इसी विषयको अधिक लिखकर पुस्तक बढाना उचित न समझकर दूसरा विषय लिखते हैं कि, संसार क्या है और आत्मा क्या है और मरनेके बाद क्या होता है और मरे हुए पितरों (मुक्तात्माओं) से किस क्रिया करनसे बातचीत होती है। जो चीजें (वस्तुयें) कि दृष्टिमें आती हैं वह मनमें जानी जाती हैं सो सब रूपांतर हुआ करतीं अर्थात् अनित्य हैं यथा-गोगोचर जहँलग मन जाई॥ सो सब माया जानहु भाई॥

यद्दृश्यं तदनित्यम् इत्यादि रूपान्तर उसको कहते हैं कि लकडी जलजानेपर राख होकर पृथ्वीमें मिलकर पृथ्वीसे फिर वृक्ष उत्पन्न होकर फिर लकडी होगई अर्थात् एक शरीरको त्यागकर दूसरे शरीरमें जीव प्रविष्ट हो जाता है इत्यादि वास्तवमें संसार पृथ्वीआदि सब मिथ्या हैं। कल्प होनेपर इन सबका नाश होजाता है और सुनिये कि एक कल्प जो है सो ब्रह्माका एक दिन और ऐसेही एक रात्रि होती है और इसी प्रमाणसे सौ वर्षकी ब्रह्माजीकी आयु कही गई है तात्पर्य यह कि समय पाकर ब्रह्माजी-

कामी नाश हो जाता है संसार केवलस्वप्नवत् सत्य प्रतीत होता है । जैसे स्वप्नमें दुःख सुख प्रत्यक्ष प्रतीत होता है और जब निद्रा दूर होती है तब ज्ञात होता है कि यह तो केवल स्वप्न था इस विषयमें एक उदाहरण देते हैं । एक मनुष्यने स्वप्नमें देखा कि मैं रेलगाडीपर बैठाहुआ कहींको जा रहा हूं उसमें कई सवारियां बैठी हुई हैं उनमें एक संन्यासीजी बैठे हुए वेदान्तके विषयकी वार्त्ता सुना रहे हैं और कहते हैं कि बचा यह संसार स्वप्नवत् मिथ्या है फिर स्वप्न देखनेवालेने कहा कि बाहजी हम कैसे झूठा माने हम तो प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि अभी अमुक स्टेशन निकल गया यहांसे बहुतसे आदमी सवार हुए और गाडीसे उतरे गाडी बराबर चल रही है हम आप परस्पर वार्त्ता कर रहे हैं हम कैसे स्वप्नवत् इसको झूंठ मान लेवें तब स्वामीजीने उत्तर दिया कि बचा सत्संगकर वेदान्तग्रन्थ देख उसके प्रतापसे तुमको ज्ञान प्राप्त होकर संसार स्वप्नवत् मिथ्या भासने लगेगा इतनेमें स्वप्न देखता हुआ मनुष्य जाग पडा उसको स्वप्नकी वार्त्ता सब याद रही उसने मनमें विचार किया वास्तवमें स्वामीजीका कहना सत्य मालूम होता है क्योंकि उस समयकी वार्त्ता मैं सब सत्य मानता था सो केवल स्वप्नही था इससे मालूम होता है कि वास्तवमें यह संसार केवल स्वप्नवत् मिथ्या है इस प्रकार उस मनुष्यको स्वयं ज्ञान होगया एक बार बोलो श्रीराधाकृष्णजीकी जय संसार क्या है केवल मनके संकल्प विकल्पसेही संसार है जैसे कि जिस समय सुषुप्ति अवस्था (बेखबरीकी निद्रा) होती है उस समय यह नहीं ज्ञान रहता कि मैं कौन हूं अर्थात् ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र राज दरिद्री सब बराबर होते हैं क्योंकि ऐसी अवस्थामें मनका प्रलय होजाता है और जब ऐसी अवस्था दूर होती है तब मनसे संकल्प विकल्प होने लगते हैं क्यों कि मनहीसे संसार है मनकी वृत्तिहीको रोकना संसारसे छूटना है । यथा—

सुषुप्तिकाले मनसि प्रलीने नैवास्ति किञ्चित्सकलं प्रसिद्धम्॥ यतो मनःकल्पित एव पुंसः संसार एतस्य न वस्तुतोऽस्ति ॥ ३ ॥ इत्यादि ।

देखो जिस समय मनुष्य शरीरत्याग करता है अर्थात् मरजाता है मरनेके उपरान्त कुछ अपने साथ नहीं लेजाता तिसपर संतोष नहीं होता है । तृष्णा अधिक बढती जाती है । यहभी केवल मनसे है देखो जो मनुष्य कृपण (कंजूस) होते हैं धन तो बहुत पास है परंतु कुछ खर्च नहीं कर सक्ते और निर्धनको धनकी चाहना अधिक होती है अगर थोडी देरके लिये आप यह समझ लीजिये कि अगर निर्धन पुरुष अपनेको कर्जी धनी और कंजूस समझकर धनवानोंको अपना नौकर मुख्त्यार आम समझकर करें मरनेके बाद धनवान् व निर्धन दोनों बराबर हैं क्योंकि साथमें धन नहीं लेजाते हैं मरना तो अलग रहा बेखबरीकी निद्राहीमें सब बराबर होजाते हैं उस अवस्थामें जाति भेद और सुखदुःखादिभी नहीं रहते इस विषयमें आगे लिखेंगे इसलिये हे प्यारे गणो संतोष अवश्य करना चाहिये अब आत्माके विषयमें कुछ लिखते हैं अगर विराट् रूपका ध्यान करके देखा जावे तो सर्वत्र आत्माही व्याप्त होरहा है आत्माहीमें सबके शरीर हैं बाहर भीतर सबकाही आत्मा अर्थात् परमात्मा व्याप्त हो रहा है जैसे तालाबमें लोटा कलश इत्यादि डाल दिया जावे तो उसके भीतर और बाहर सब कहीं जल व्याप्त हो रहा है अब इस गूढतत्त्वको यहांपर विशेष नहीं कहकर अब मनोमय सूक्ष्मशरीरको यहां आत्मा कहकर समझाते हैं जैसे स्वप्न देखते समय जीव शरीरहीमें रहता और मनोमय आत्मा फिरा करता है अर्थात् एक मुकामी दूसरा शैतानी इसपर लोग शंका करेंगे कि सूक्ष्मशरीर कहीं नहीं जाता केवल ख्यालही पैदा हो जाता है यह बात मिथ्या है क्योंकि ऐसे दृष्टांत बहुतसे हैं और ठीक हैं कि

अमुक मरते २ जी गया और उसने कहा कि मुझको मालूम हुआ कि दो आदमी मुझको पकडकर ईश्वरके यहां ले गयेथे वहां मुझको दागदिया और भगादिया और हुकुम हुआ कि इस नामका अमुक आदमी है उसको लाओ फिर मैं होशमें हो गया और मेरे शरीरमें निशान दागे हुयेका उसी समयसे हो गया और लीजिये कि अमुक योगी अभी यहां था और अभी देशमें पहुँच गया अथवा दूर देशकी खबर ठीक २ सूक्ष्म शरीरके द्वारा आसक्ती है इत्यादि ऐसे उदाहरण बहुतसे हैं केवल उदाहरण लिखकर पुस्तक बढाना मुनासिब नहीं ईश्वरमायामें कोई आश्चर्य नहीं सब सत्य है तपे हुए लोहेमें लालवर्ण जैसे अग्नि व्याप्त हो रही है उसी तरह शरीरमें आत्मा व्याप्त है स्थूल शरीरका हाथ काटनेसे आत्माका हाथ नहीं कटता इत्यादि अब यह विषय लिखते हैं कि मरनेके बाद क्या होता है ।

सूर्यकी रोशनीमें रोशनदानमें छोटे २ भुनगेसे उडते मालूम होते हैं इसी प्रकार पहिले छोटेसे छोटे जीवमें आत्मा प्रवेश करता है फिर क्रमानुसार कीडे मकोडे पक्षी पशुमें होकर बलवान् होती हुई मनुष्यका शरीर पाता है यह मनुष्य शरीर बहुत दुर्लभ है । क्यों कि इसमें ज्ञानकी प्राप्ति होती है अर्थात् यथार्थ जान सक्ता है इसके उपरांत पितृलोकादिमें उच्चगति प्राप्त करता हुआ अंतमें ब्रह्ममें लय होजाता है वारंवार इसी प्रकार ऐसा हुआ करता है पाठशालावत् जैसे पाठशालामें लडके हमेशा बने रहते हैं पितृलोकादि सूर्यसिद्धांतादि प्राचीन ग्रन्थोंमें विख्यात हैं यह मृत्युलोक अर्थात् मनुष्य शरीरको फर्जी मिडिल क्लास मानकर उच्चगति प्राप्त करनेकी वह्वी उदाहरण रूपसे समझते हैं पितृलोकादिको इण्ट्रैंसादि क्लास फर्जी समझियेगा जीवित अवस्थामें जैसे शुभाशुभकर्म किये होते हैं मरने बाद उसीके अनुसार शक्ति होकर उसी लोककी प्राप्ति होती है जैसे

१ संत महात्माओंका पंथ दूसरा है जो कि ब्रह्मांड पारको सतलोकोपहुँचा देता है ।

स्कूलमें लडके पास होकर ऊंचे दर्जेको प्राप्त करते और फेल होनेपर वर्षोंतक उसी दर्जेमें पडे रहते हैं इसी तरह बारंबार जन्म होना मिडिल क्लासमें फेल होकर पडे रहना है पास होकर स्कूल छोड देते कोई और नये लडके भरती होते रहते हैं अर्थात् स्कूल लडकोंसे खाली नहीं होता है और जो योगी ज्ञानी होते हैं वह एकदम बहुत उच्चगतिको प्राप्त कर सक्ते हैं क्यों कि उनकी अभ्यास शक्ति बढजाती है जैसे बाजे लडके केवल घरहीपर प्राइवेट तौरपर पढकर परीक्षा देकर एक दम उच्च दर्जेको पहुँच जाते हैं और मुक्ति आवागमनरहित होना अत्यंत दुर्लभ है जब सब ख्यालात संकल्पविकल्प दूर होकर कुछ सुख दुःख नहीं व्याप्त इच्छारहित इत्यादि होता है तब हीं मुक्ति होती है । मरने समय जो ख्यालात रहते हैं प्रथम तो उसीकी प्राप्ति होती है जैसे मरनेके समय यह ख्यालात होजावे कि मैं राजा होता तो अवश्य राजाके घर उत्पन्न होकर राजा होवेगा और अगर मरनेके समय कुछ इच्छा न रहे तो अवश्य एकदम ब्रह्ममें लय होजावे सो अत्यंत दुर्लभ है इसी लिये सब तरफसे मनको रोकनेका अभ्यास ज्ञानी जन किया करते हैं यह बात तो प्रायःसबही जानते होंगे कि अंत मतः सो गतः बहुतसे लोग इस बातपर शंका करने लगेंगे अजी सब मिथ्या है लोक शोक कुछ नहीं है लोक होनेके विषयमें सूर्यसिद्धान्तादि ग्रन्थोंमें साफ लिखा है प्यारे मित्रो बहुतसे पदार्थादि ऐसे हैं जो दृष्टिमे नहीं आते हैं और वास्तवमें सब सत्य हैं वह केवल विद्याहीसे जानी जाती हैं देखो जो सूर्य पृथ्वीसे बडा है छोटासा दिखलानेके कारण अज्ञानी जन कदापि नहीं मानते कि सूर्य पृथ्वीसे बडा है जिसके विषयमें सिद्धांत ग्रन्थोंमें यथार्थ लिखा हैजिनके गणितसे सूर्यचन्द्रके ग्रहण बतलाये जाते हैं दूसरी बात यहभी है कि जो ब्रह्म शरीरमें व्याप्त होरहा है जिसको कि सब जानते हैं परंतु जिस समय निकल जाता है दृष्टिमें नहीं आता तो क्या ब्रह्मका होना नहीं माना जावे महाभूलकी बात है बहुतसे हठीजन प्राचीन ऋषियोंकी कहीहुई

बातोंको काटकर उनका खंडन करते हैं कि वाहजी यह बात समझमें नहीं आती गैर मुमकिन (असंभव) है ऋषियोंके सदृश आप बुद्धिमान् बनते हैं और अपनी बातहीका मंडन करते हैं ईश्वरकी मायाका पार नहीं पाया जाता अर्थात् असम्भवभी सम्भव होजावे तौ कोई आश्चर्य नहीं है अब हम इस विषयको कुछ पुस्तकके अंतमें लिखेंगे अब मरनेके बादकी हालत (अवस्था) प्रकट की जाती है जिस समय आत्मा शरीरको त्याग करता है उस समय जीव निकलकर जीवनप्रवाहमें मिल जाता है और जीवित अवस्थामें आत्मा और शरीरके संयोगद्वारा जो कुछ किया गया है सो मनोमय सूक्ष्म शरीर उस समय प्रगट होकर उसको अवस्थाभरके गत वृत्तांत मालूम रहते हैं जैसे स्वप्नमें कोई दरियाफ्त करे कि इस समय तुम्हारे कै लडके हैं तौ उत्तर स्वप्नमें भी ठीक दिया जावेगा इत्यादि अगर कोई शंका करै कि सूक्ष्म शरीर दृष्टिमें क्यों नहीं आते उत्तर यह है कि चर्मचक्षुद्वारा । स्थूल वस्तुही देखनेमें आती है यह केवल ज्ञान दृष्टिसेही देखा जाताहै वायुतत्त्व दृष्टिमें नहीं आता शरीरमें स्पर्श होता है और जब मिट्टी, मिलकर उनसे अथवा जलतत्त्व मिलकर धुआं (धूम्र) होकर वायु दृष्टि आती है ॥ जैसे सुगंधको नेत्रोंसे नहीं देखसक्ते इत्यादि मनोमय आत्माका नाश नहीं होता यथा--" माया मरी न मन मरो, मर मर गये शरीर आशा तृष्णा ना मरी, कह गये दास कबीर॥" मनका मारनाही मुक्ति है । फिर वही मनो मय आत्मामें शक्ति जिस लोकके लायक (योग्य) होती है उसी लोकमें पहुँच जाती है अपनेसे नीचेके लोकमें भ्रमण कर सक्ती है परन्तु ऊंचेके लोकमें नहीं जासक्ती । उन्नति प्राप्ति करके शक्ति बढनेपर ऊंचे दर्जेमें पंहुच सक्ती है और अपने २ लोकको सबसे ऊंचा समझती है जैसे पृथ्वी पर रहनेवाले मनुष्य अपने २ स्थानको सबसे ऊंचा समझते हैं उस हालतमें स्थूलशरीका बोझ न होनेपर

जिस समय आत्माका मन हुआ कि अमुक स्थानमें जाऊं बस तत्क्षण वहांही पहुँच जाता है । मनकी भावनाहीसे तृप्ति होती है नीचे दर्जेकी आत्माही भूत प्रेतादि होते हैं इनका वास स्थान पृथ्वी-हीपर वृक्षादिपर रहता है नीचे या ऊँचे दर्जेकी आत्माकी संज्ञा इस पुस्तकमें मुक्तात्मा जानना । मुक्तात्मा मनुष्यके मनकी बात जानसक्ताहै क्योंकि मनुष्यके मनमें जो ख्यालात हुआ करते हैं वह दहिने अंगसे बिजलीके साथ साथ निकलाकरते हैं और वायुमें मिलकर अक्षर रूपी होकर ऊपरकी तरफ चले जाते हैं उनको मुक्तात्मा पढ सक्ता है मुक्तात्माओंसे किस प्रकार मुलाकात बातचीत होती है सो क्रम लिखते हैं प्रथम तो बहुतसी बातोंका त्याग करना पडता है जिनमेंसे जरूरी बातोंको यहांपर लिखते हैं झूंठ बोलना धीरे धीरे त्यागता रहे दूसरी बात अहिंसा अर्थात् जीव हत्या न करे, नशाभी न ग्रहण करे, किसीसे कटुवचन न कहे जिससे किसीके मनमें खेद होवे-सबकी आत्माको अपने समान समझे किसीको कभी तकलीफ न पहुँचावे बुरे कर्मोंका त्याग जिस कदर होसके करता रहै इस विद्यामें तीन आदमीसे कम और अधिक दश ग्यारहतक शरीक हो सक्ते हैं अंगरेजीमें इस विद्यका नाम (इस्प्रिचुआलिज्म) है जो आदमी इस अध्यात्ममंडलीमें युक्त किये जावें वह शांतचित्त भले आदमी होवें विद्यापर विश्वास करें अविश्वासी न हों और मंडलीके समाचार औरोंसे कदापि नहीं कहने चाहिये एकांतस्था-नमें एक कोठरी पवित्र करके उसमें एक टेबल (मेज) बीचमें रखकर उसके चारोंतरफ कुर्सियां रक्खी जावें जितने आदमी उतनी कुर्सियां होनी चाहिये लडका लडकी और स्त्रीभी शामिल होसक्ती हैं और स्त्रियां लडकेपर असर जल्दी होता है वहांके लिये अपने अपने कपडे पवित्र अलग रहें जो केवल उसी समय पहिने जावें रातके नौबजेके बाद सब जने हाथ मुख धोकर कपडे पहिरकर कोठरीमें जाकर कुर्सियों पर बैठें एक सादी कापी बतौर

रोजनामचा कैफियतके रहे जिसपर रोजानाकी कैफियत लिखी जाया करे और थोडा कोरा कागज और पेन्सिल भी मौजूद रहे और दीपकका इन्तिजाम रहे अगर मुम्किन होसके तौ सूर्य्य अर्थात् आशी शीशेसे अग्नि बताकर गडी रक्खे उसीसे दीपक जलालिया करे क्योंकि दियासलाईमें फास्फर्स (जो मुर्देकी हड्डीसे बनता है) लगता है इस कारण दियासलाईकी बनीहुई अग्नि अशुद्ध समझना चाहिये जहांतक होसके पवित्रताईसे करे परंतु जो बात मुस्किल समझे उसकी कैद न समझे मेजकी चारोंतरफ कुर्सियोंपर पास २ सब बैठें परंतु विपरीत गुणवाले पास २ रहें अर्थात् कालेके पास गोरा गर्म मिजाजवालेके पास सर्द मिजाजवाला बुद्धिमान्‌के पास कम-बुद्धिवाला इत्यादि गुणवाले पास २ बैठा करें अगर कोई इसका कारण पूछे तौ शक्तिसमान करनेके लिये विपरीत गुणवाले पास २ बैठाले जाते हैं विस्तारपूर्वक लिखकर निरर्थक पुस्तक बढाना मुनासिब नहीं है एक आरामकुर्शी भी अलग रक्खी रहना चाहिये वहां बैठे हुए सब मनुष्य अपने २ मनसे सब तरहके ख्यालात एकदमसे दूर कर स्थिरचित्त होजावें क्योंकि इस विद्यामें चित्तकी स्थिरताकी अधिक जरूरत है और मेजपर अपने २ हाथोंकी हथेलियोंको जमाकर अंगु-लियोंको फैलाकर अंगुलियोंकी फुनगियोंको परस्पर जिस कदर मिल सकें मिला लेवें इस प्रकार मिलानेसे बिजलीका गोलाकार चक्र बन जाता है फिर दीपकको बुझा देवे या वहांसे हटा देवे जिसमें अंधेरा होकर परस्पर मुख न दिखलाई देवे और १ लोटेमें पवित्र जल मेजके नीचे रखलिया करै । फिर नेत्रोंको बंद करके सब मिलकर एक ओर दृढ ध्यान लगाओ और मनमें यह कहते रहो कि हे परमात्मा किसी अच्छे मुक्तात्माको भेज जो आनकर हमलोगोंको उपदेश देवे इस तरह घंटा अथवा डेढ घंटा जब-तक तबियत चाहे रोजाना बैठना चाहिये फिर एक आदमी उनमेंसे उठकर आहिस्तेसे दीपकका प्रकाश करदेवे फिर

देखें अगर सब आदमी होशमें हों तो जो कुछ कैफियत कि मालूम हुई हो अथवा न हुई हो अपने रोजनामचेपर लिखकर मेजके नीचे- वाला पानी थोडासा दक्षिणदिशाकी तरफ डालकर जरा जरा बतौर आचमनके सबको पीलेना चाहिये इस प्रकार रोजाना करना चाहिये अगर किसी रोज कोई बतौर सोनेके बेहोश होजावे तो उनमेंसे जो अधिष्ठाता (मैनेजर) हो केवल वही धीरे धीरे सीधे पास देवे जिससे बेहोशी और होवे पास देनेका क्रम हम पहिले समझा चुके हैं फिर पुकारे कि आप अपना हाल बतलाइये आप किस सत्पुरुषके मुक्ता- त्मा हैं अगर जवाब न देवे तो पास और देवे और ठहर ठहरकर दरियाफ्त करता रहे जल्दी नहीं करना चाहिये फिर अगर मध्यस्थ (अचेत हुआ मनुष्य) कहे कि आराम कुर्सीपर लिटा दो तो दोजने आहिस्तेसे पकडकर आरामकुर्सीपर सुला देवें अगर कुछ न कहे तो वहीं रहने देना चाहिये मध्यस्थपर जो मुक्तात्मा आया होगा वह बराबर बातचीत अर्थात् प्रश्नोत्तर करेगा आपका क्या नाम है आप कहाँ रहते थे अब आपकी क्या हालत है इत्यादि पूंछना चाहिये अगर नामादि न बतलावे तो किसी बातके पूंछनेमें हठ न करना चाहिये और खुशामदसे पेश आवे और कहे कि आपलोग हमारे चक्रमें आया कीजियेगा इत्यादि जब मुक्तात्मा जानेको कहैं तब नमस्कार राम राम प्रणाम सलाम यथा उचित करना चाहियें फिर पांचमिनट बाद मध्यस्थको उलटे पास देकर होशमें करलेवै जबतक कोई मध्यस्थ (मिडियम) न होवै जबतक अपनी अपनी जगह बदलकर बैठा करे जब मध्यस्थ कोई होजावे तब अपनी अपनी जगहको न बदले और मध्यस्थको दक्षिणमुख बैठाला करें जिस रोज सबका ध्यान एक होवैगा मुक्तात्मा अवश्य आवैगा पहिले तो नीचे दर्जेका मुक्तात्मा आया करता है फिर ज्यों ज्यों शक्ति बढती जाती है ऊचं दर्जेका मुक्तात्मा आने लगता है फिर अभ्यास शक्ति बढनेसे जिसके मुक्तात्माको बुलाना चाहे सब मिलकर उसका ध्यान करनेसे

अभीष्ट मुक्तात्माको बुला सक्ते हैं जबतक मुक्तात्मा बराबर आने न लगैं तबतक उनसे कोई परीक्षार्थ बात न पूंछना चाहिये और मुक्तात्माभी दरियाफ्त करनेसे बहुतसे नियम बतलाया करता है और तरह तरहकी अद्भुत माया दृष्टि आया करती है इसपर विश्वास करके करना छोडे नहीं एकबार नहीं दशबार एक जगह नहीं दश जगह एक प्रकार नहीं दशप्रकारभी करनेसे अगर कुछ न मालूम होवै तो हमसे पत्रब्योहार करे यह विद्या बहुत सत्य है और मैंने स्वयं करके देखाहै पहिले मुझको इस विद्यापर विश्वास नहीं था फिर मैंने परीक्षा की तो यथार्थ पायी जिससे मेरा विश्वास दृढ होगया और मध्यस्थ अगर अंगरेजी नहीं पढा है और किसी अंगरेजी पढेहुएका मुक्तात्मा आजावै तो अंगरेजी बोल सक्ता तथा लिख सक्ता है और एक बातका ध्यान रखना चाहिये कि कोई मुक्तात्मा ऐसा होता है कि जिसको बोलनेकी शक्ति नहीं अथवा गूंगेकी मुक्तात्मा है केवल लिखनेकी शक्ति है तो मध्यस्थका हाथ हिलने लगेगा हाथ हिलनेसे हाथमें पेन्सल देकर नीचे सादा कागज रखकर पूंछनेसे उत्तर बराबर लिखता रहेगा । इत्यादि इस कार्यके करनेमें ऐसा हुआ करता है कि हमेशाके लिये नहीं करवाते हैं बीचमें कोई ऐसा काम पडजाया करता है जिससे छूट जाता है यह बात मेरी अनुभव है इस कामके करनेमें अपने किसी काममें हर्ज नहीं होता है क्योंकि सब कामसे निश्चिन्त होकर रात्रिके समयही यह चक्र किया जाता है अगर किसी समय दुष्टमुक्तात्मा आकर मध्यस्थके शरीरको तकलीफ देने अथवा उपद्रव करने लगे और जावे नहीं तो मेजके नीचेवाले जलसे मध्यस्थके नेत्रोंको धोनेसे भाग जावेगा अगर न भागे तो मध्यस्थको बीचमें करके उसके चारोंतरफ सब बैठकर अपने २ हाथोंको मिलाकर चक्र बनाकर सच्चे दिलसे सब मिलकर परमात्माका ध्यानकरके कहो कि हे परमात्मा इस दुष्ट मुक्तात्माको निकाल ऐसा करनेसे बहुत जल्द भाग जावेगा ।

अब इस विषयकी यहां समाप्ति करके अन्य शक्तियोंका वर्णन और उनकी क्रियामें लिखते हैं ।

दृष्टिशक्ति बढानेका क्रम—अपने सामने दर्पण रखकर अपना मुख देखना या दीवालपर एक बिन्दू दो इंचकी गोलाईका काजलकी स्याहीसे बनाकर उसको सिद्धासन या पद्मासनसे बैठकर प्रतिदिन उसको दृष्टि जमाकर देखा करे आसनका क्रम हम आगे लिखेंगे और पलकोंको देरतक खोले रहकर देखनेका अभ्यास बढावे अगर नेत्रोंसे पानी निकले तो उसको निकल जाने देवे अभ्यास बढाते बढाते इतना तो अवश्य करलेवे कि आधा घंटातक पलक खोले हुये देखता रहे अगर अधिक देरका अभ्यास होजावे तो और भी उत्तम है.

ध्यानशक्ति बढानेका क्रम—पूर्वोक्तासनसे एकांत स्थानमें बैठकर किसी मूर्तिका ध्यान मनमें करे प्रति दिन ऐसा अभ्यास करनेसे जब इतना अभ्यास होजावे कि ध्यानमें लय होजाय अर्थात् ढोल बजरही हो या कोई शरीरमें चुटकी लेवे तो कुछ खबर नहीं तब उसको ध्यानशक्तिकी प्राप्ति होती है.—

श्वासशक्ति बढानेका क्रमः—प्राणायामकी विधि तो आगे लिखेंगे परंतु एकचित्त होकर क्रमक्रमसे अपना श्वास रोकनेका अभ्यास करनेसे श्वासको देरतक रोक सकता है. धारण ध्यान समाधि तीनों मिलकर संयम होता है, दृढ संयम होजानेपर अनेक कार्य दूर श्रवण दूर दर्शनादि होसकते हैं ॥

नतीजा अर्थात् फल—पूर्वोक्त तीनों बातोंका अभ्यास कर लेनेसे औरोंको लाभहानि पहुंचा सकता है क्योंकि वह भस्म पानी इत्यादि वस्तुओंमें अपना अभीष्ट गुण (असर) प्रवेश करके हानि लाभ पहुंचा सकता है यथा किसीके मस्तकमें दर्द होरहा हो तो उसको सामने बिठाकर उसकी तरफ देखनेसे अथवा जलादिको देखकर

पिलानेसे तत्काल दर्द दूर कर सकता है अथवा उसके दर्दको अपने नेत्रों और ध्यानद्वारा खींचकर फिर जलमें दृष्टि करके दर्दके असरको जलमें नेत्रों और ध्यानद्वारा छोडता रहे ऐसा करनेसे दर्दको जलमें खींच सकता है और अगर उस जलको चंगे मनुष्यको पिलादिया जावे तो उसके मस्तकमें फौरन दर्द होने लगेगा इत्यादि ।

परंतु इस विषयमें इतना अवश्य उचित है कि पानी दर्द दूर करनेके वास्ते बनाना हो तो अपने बाँये हाथपर पानीका गिलास रखकर दहिने हाथसे पकडे रहे और अपने नेत्रोंसे दृष्टि जमाकर देखता रहे और मनमें यह अभ्यास करे कि यह जल अमुक दर्दको दूर करदेवे जितना अभ्यास अधिक होगा उतनाही जल्दी पानीमें गुण प्रवेश कर सकेगा बहुतसी बातोंको तुरंत फायदा पहुंचा सकता है अधिक प्रशंसा करना उचित नहीं है जो इस विद्याको जानते हैं इसकी शक्तिकोभी खूब जानते हैं जो इसका अभ्यास करेगा वह स्वयं प्रत्यक्ष देख लेगा परंतु किसीको तकलीफ देना या इसके द्वारा पैसा पैदा करना या बतौर तमाशेके करना या पापकर्म करनेके निमित्त कदापि (हरगिज) मत करो वरन् तुम्हारी शक्ति घट जावेगी देखो ईश्वरने इंद्रियोंमें अपूर्व शक्तियाँ दी हैं जैसे आंखसे देखना कानोंसे सुनना नाकसे सूंघना मुखसे खाना इत्यादि जिसको आँखसे एक बारभी देखा हो उसका ध्यान करनेसे तत्काल उस मूर्त्तिको देख सकता है अथवा उसे फिर कभी किसी स्थानमें देखनेसे यह ज्ञात होता है कि इस मूर्त्तिको मैंने अमुक स्थानमें देखा था परंतु अपनी मूर्ति जो दर्पणमें अनेक बार देखी गई है विना अभ्यास किये जल्दी ध्यानमें नहीं आती है और कानोंसे जिसकी आवाज सुनी है वह यदि अपरोक्ष (आडमें) बोले तो भी मालूम हो जाता है कि अमुक बोल रहा है और बाजे समय धोखा भी होजाता है जैसे बोली सुनकर ज्ञात हुआ कि अमुक बोल रहा है और जब सामने जाकर देखा कि यह अमुक नहीं है परंतु यह बोली अमुकके सदृश मालूम होती है, परंतु

अपनी बोलीके तुल्य अगर बोलनेवाला मिल भी जावे तो यह ज्ञात नहीं हो सकता कि मेरी आवाजके तुल्य इसकी भी बोली है अर्थात् अपने स्वरूपका ज्ञान होना कठिन है. और देखो नाकमें सूंघनेसे ज्ञात होता है कि यह अमुक गंध है जिसको कि पहिले जान चुका हो और मुखमें खानेसे ज्ञात होता है जैसे उर्दका मोदक खिलावे और कहै कि यह तंदुल (चावल) का मोदक है तो खानेवाला तत्काल बतलोदेगा कि वाहजी यह तो उर्दका मोदक है इत्यादि. देखो जब इन्द्रीके योग्य पदार्थ नहीं मिलता तब क्लेश होता है जैसे भूँख लगी और भोजन नहीं मिला इत्यादि और जब इन्द्रीके योग्य पदार्थ मिलता है तब संतोष होता है और जब दो तीन इंद्रियोंके पदार्थ एकसाथ मिलते हैं तो आनंद प्राप्त होता है जैसे मखमली सेजपर लेटा हुआ हो और चन्द्रमुखी वस्त्राभूषणयुक्त गानेमें प्रवीण प्रियवक्ता अपने सामने सुरीली ध्वनिसे गारही हो तो कैसा आनंद प्राप्त होता है क्योंकि शरीरके वास्ते मखमली सेजका आनंद और कानोंको सुख सुरीली ध्वनिका सुनना और नेत्रोंका सुख उस चंद्रमुखी (नाजुकवदनी) को देखना इत्यादि जब आनंद प्राप्त होता है तब मनभी एक तरफ चकित होकर उस आनंदमें मिलजाता है इत्यादि अदृश्य निराकार पदार्थोंको केवल मनही जान सक्ता है जैसे शोक आनंदादि और नेत्रों द्वाराभी चेष्टा देखकर कुछ कुछ ज्ञात हो जाता है और कानों द्वाराभी रोना हँसना सुनकर अनुभव किया जाता है परंतु ईश्वरकी माया नहीं जानी जाती यथा—'अतीतः पंथानं तव च महिमा वाङ्मनसयोः' इत्यादि हे प्रभो ! आपकी महिमाका पार वाणी और मन दोनों करके नहीं जाना जाता अर्थात् महिमाका मार्ग अनंत है ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसमें तेरी सत्ता अर्थात् तू न हो और विषय सुनिये आत्मा मनके साथ जाता है मन इन्द्रियोंके साथ जाता है और इन्द्रियाँ अपने विषय शब्द आदिके साथ जाती हैं यह आत्माके जानेका शीघ्र क्रम है और यही योग है मनको कोई स्थान अगम्य नहीं और जहां यह मन जाता है वहीं

यह आत्मा चला जाता है अति सूक्ष्म यह जीवात्मा हृदयके बीच परमात्मामें स्थित है निरंतर अभ्याससे निश्चल चित्त करके उसका ग्रहण करना चाहिये जो जिसका चिंतवन करता है वह उसमें तन्मय हो जाता है.

यथा बृहत्संहितायाम् ।

आत्मा सहैति मनसा मनइन्द्रियेण स्वार्थेन चेन्द्रियमितिक्रमएष शीघ्रः ॥योगोऽयमेव मनसः किमगम्यमस्ति यस्मिन् मनो व्रजाति तत्र गतो यमात्मा । आत्मायमात्मनि गतो हृदयेपि सूक्ष्मो ग्राह्यो चलेन मनसा सतताभियोगात् ॥ योयंविचिन्तयति याति सतन्मयत्वं अस्मादतः सुभगमेव गतायुवंत्यः ॥ शान्तिः ३ ॥

अब अन्य अभ्यासोंको लिखते हैं ।

षोडशाधारषट्चक्रं त्रिलक्ष्यं व्योमपंचकम् ।
यस्य देहे न जानाति कथं योगी स कथ्यते ॥

अर्थात् अपने शरीरमें जो षोडशाधार त्रिलक्ष्य व्योमपंचक हैं जो इन्होंको नहीं जानता है उसको योगी नहीं कहते हैं ॥

ब्रह्मचक्रं तु प्रथमं लिंगचक्रं द्वितीयकम् ॥ नाभिचक्रं ततो ज्ञेयं हृदिचक्रं ततः परम् ॥ कंठचक्रं ततो ज्ञात्वा भ्रुवोश्चक्रं तथापि च ॥ इत्येव चक्रषट्कं च यो जानाति स योगिराट् ॥

अर्थात् ब्रह्मचक्र, कण्ठचक्र, हृदयचक्र, नाभिचक्र, भौओंके बीचका (आज्ञा) चक्र लिंगचक्र इस प्रकार ६ चक्र शरीरमें हैं इनको जो अच्छे प्रकार पहिचानता है वह योगिराज है ॥

प्राणोऽपानःसमानश्च ह्युदानो व्यान एव च॥ पृथ्वी ह्यापश्च तेजश्च वायुराकाशमेव च॥ अहंकारो मनो बुद्धिश्चित्तं कारणमेव च॥ ज्योतीरूपं च तत्रैव षोडशाधार उच्यते॥

अर्थात् प्राण १ अपान २ समान ३ उदान ४ व्यान ५ पृथ्वी ६ जल ७ तेज ८ वायु ९ आकाश १० अहंकार ११ मन १२ बुद्धि १३ चित्त १४ कारण (कारणशरीर) १५ और ज्योतिस्वरूप १६ इनको षोडशाधार कहते हैं,

प्राण हृदयमें, अपान गुदास्थानमें, समान नाभिस्थानमें, उदान कंठमें, व्यान, वायु सर्व शरीरमें व्याप्त है.

ऊर्ध्वंलक्ष्यं भवेत्तालौ मध्यलक्ष्यं भवेद्धृदि॥अधोलक्ष्यं भवेन्नाभौ लक्ष्यातीतं निरंजनम्॥

अर्थात् तालुमें ऊर्ध्व लक्ष्य है, हृदयमें मध्य लक्ष्य है, नाभिमें अधो लक्ष्य है अर्थात् निरंजन (परमात्मा) लक्ष्यातीत है. अब षट्चक्रोंकी व्याख्या विशेषरीति करके अर्थात् क्रमसे चक्रोंका स्वरूपादि वर्णन करते हैं.

भूतशुद्धिप्रकारं च कथयामि महामुने।मूलाधारात्समुत्थाय कुंडलीं परदेवताम्॥ इत्यादि।

१ लिंगचक्र अर्थात् आधारचक्र जिसका स्थान गुदा और लिंगके मध्यमें है यह अधोमुख चार दलका है दलोंसे प्रयोजन यह है कि नाडियाँ (नसें) यहांसे चारों तरफ फैली हैं. तत्त्व पृथ्वी, वर्ण रक्त क्योंकि खूनमें मिट्टी मिलजानेसे गाढा रक्त रंग होजावेगा तत्त्वका बीज (लँ) है, वाहन हस्ती है तात्पर्य्य यह कि इस स्थानकी वायुकी गति हस्तिगतिसम है. देवता ब्रह्मा, देवशक्ति डाकिनी यंत्र चौकोण, दलोंके अक्षर (वँ शँ षँ सँ) और स्वयंभू नामक लिंग भी इसी स्थानमें है॥

२ स्वाधिष्ठान चक्र स्थान पेड़ू, दल षट्, वर्ण सिंदूर, दलोंके अक्षर (वँ मँ यँ रँ लँ) तत्त्व जल, बीज (वँ) बीजवाहन मकर देवता विष्णु, देवशक्ति शाकिनी, यंत्र गोल चंद्राकार ।

३ नाभि अर्थात् मणिपूरक चक्र—स्थान नाभि, दल दश, वर्ण नील, दलोंके अक्षर (डँ ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ) तत्त्व अग्नि तत्त्वबीज (रँ) बीजवाहन मेंढा, देवता वृद्ध रुद्र, देवशक्ति लाकिनी, यंत्र त्रिकोण ॥

४ हृदय अर्थात् अनाहत चक्र—स्थान हृदय, दल द्वादश, वर्ण अरुण, दलोंके अक्षर (कँ खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ) तत्त्व वायु तत्त्वबीज (यँ) बीजवाहन मृग, देव ईशान, देवशक्ति काकिनी, यंत्र षट्कोण इस चक्रके वाम भागमें अष्टदलका गुप्त चक्र है जिसमें भौंरारूपी मनका वास है और बाणाख्य लिंगभी यहां है ॥

५ कंठचक्र अर्थात् विशुद्धाख्य चक्र—स्थान कण्ठ, दल षोडश दलोंके अक्षर (अँ आँ इँ ईँ उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ ॡँ एँ ऐँ ओँ औँ अँ अः) तत्त्व आकाश बीज (हँ), वाहन हस्ती, देव पंचवक्त्र सदाशिव, देवशक्ति शाकिनी, यंत्र गोलाकार ॥

६ भ्रूचक्र अर्थात् आज्ञाचक्र—स्थान भ्रुवोंके मध्यमें दल दोदलोंके अक्षर (हँ क्षँ), वर्ण श्वेत, तत्त्व महत्तत्त्व, तत्वबीज ॐ, बीजवाहन नाद देवलिंग (अर्द्धांगाशिव,) देवशक्ति हाकिनी, यंत्र लिंगाकार, अर्द्धचंद्र प्रकाश तिसके ऊपर स्थानसे अनहद शब्द हुआ करता है और इसी चक्रमें इतराख्य लिंग है ॥ स्वयम्भू. बाणाख्य इतराख्य यही लिंगत्रयात्मक है ॥

७ सातवां शून्य नामक चक्र है—स्थान मस्तक (सिर), दल सहस्र, दलोंके अक्षर (अ से क्ष तक) जो ५० अक्षर हैं एक हीसे अक्षर २० बीस दलोंपर हैं तत्त्व तत्त्वातीत, तत्त्वबीज विसर्ग (:), बीजवाहन बिंदु (.), देव परब्रह्म, देवशक्ति महाशक्ति, पूर्णचंद्र निरा-

कार अपने इष्टदेवका स्थान यही है ॥ इन विषयोंको श्रीस्वामी हँस-स्वरूपजीने अपनी पुस्तकषट्चक्र निरूपण नामकमें पूर्ण रीतिसे चित्रों और प्रमाण सहित दर्शाया है ॥

अब प्राणायामविधि वर्णन करते हैं—प्रथम अहारसंधि शुचि करई । पाछे पवनबंध मन धरई ॥ इत्यादि पहिले तो संधियोंको शुद्ध करना चाहिये अर्थात् दो भाग अन्न और १ भाग जल ग्रहण करै और १ भाग वायुके लिये खाली रक्खे और दूध चांवल मूंग अर्थात् जो जल्द पचजावे ऐसे भोजन करने चाहिये और फिर सिद्धासनसे बैठकर अर्थात् वाम पैरकी एडीसे आधारचक्रके स्थानको दबाकर दाहिने पैरकी एडीको लिंगकी जडके ऊपर रखकर बैठे और दोनों हाथोंको दोनों पैरोंकी एडियोंपर कडा करके रक्खे हाथके अंगूठेंसे हाथोंकी तर्जनी और कनिष्ठिका नामक अंगुलीकी फुनगियोंको दबालेवै और शरीरको कडा करके मुखकी ठुड्डीको कण्ठके नीचेके स्थानमें दबाकर बैठे इस प्रकार बैठनेको सिद्धासन कहते हैं। अब हम क्रमानुसार विधि बतलाते हैं निर्विघ्न एकांत स्थानमें स्थिरचित्त होकर पूर्वोक्त सिद्धासनसे बैठकर अपनी नासिकाके अग्रभागको थोडी थोडी देर जबतक तबियत सावधान रहै, देखाकरै फिर पूर्वोक्त चक्रोंके जो बीज (लँ वँ रँ यँ हँ ॐ)इनका उच्चारण करता हुआ नेत्रोंको बंद कर दृष्टिको भीतर करके नीचे (आधारचक्र) से चक्रोंका ध्यान करता हुआ ऊपर (आज्ञाचक्र) पहुँचकर ॐ ॐ जपता हुआ ठहरकर सातवें चक्रका ध्यान करे फिर विपरीत क्रमसे (ॐ हँ यँ रँ वँ लँ) बीज जपता हुआ ऊपरसे नीचे आजावै कुछ रोज इसका भी ध्यान करलेवै जिसमें चक्रोंका ध्यान स्पष्ट होजावे और भीतर दृष्टि करनेका अभ्यास इस प्रकार करै कि अपने सामने दीवार पर एक चित्र लगाकर आप सिद्धासनसे बैठकर नेत्रोंकी पुतलियोंको ऊपर चढाता हुआ देखा करे फिर भृकुटिके मध्यमें दृष्टिके। लेजानेका अभ्यास करके ध्यानमें मग्न होजावे फिर सर-

लतासे स्वयं दृष्टि भीतर कर सकेगा सिद्धासन बैठनेका यह प्रयोजन है कि जो आधार चक्रमें कुण्डलिनी देवी सर्पाकार साढे तीन लेपटा होकर वायुको सीधे मार्ग जानेमें रोके हुये है वह सीधी होकर वायुमार्ग शुद्ध होजाता है उस समय शून्यचक्र अर्थात् मस्तकसे अमृत झरता हुआ सब चक्रोंमे पहुँच जाता है जिससे शरीररूपी कमल खिलता है और आधारचक्रसे ऊपर मस्तकवाले चक्रतक सीधी सूक्ष्माकार नाडी चली गई है जिसका नाम है सुष्मना इस नाडीके भीतर तीन गुप्त नाडियां और हैं जो महात्माओंके द्वारा जानी गई हैं जिनके नाम बज्राचित्रनी और ब्रह्मनाडी जो सबके मध्यमें है प्राणायाम तीन प्रकारका होता है पूरक अर्थात् श्वासको भीतर खीचना, कुम्भक अर्थात् श्वासको भीतर रोकना, रेचक अर्थात् श्वासा जो भीतर रोक रक्खी है उसको छोड देना, प्राणायाम करनेकी कई युक्तियां हैं परन्तु हम केवल एक सरल युक्ति बतलाते हैं पूर्वोक्त सिद्धासनसे बैठकर गुदाके स्थानसे वायुको खींचता हुआ उक्त चक्रोंद्वारा ध्यान करता हुआ क्रम क्रमसे ऊपर चढानेका अभ्यास करै फिर जहांतक चढ सके वहां कुछ देरतक रोककर क्रमसे नीचेको उतार लेवै इसी प्रकार अभ्यास करते हुये आज्ञाचक्रमें आकर अनहद शब्द सुनता हुआ शून्यचक्रका ध्यान करै अर्थात् शून्यचक्रमें ठहरकर अपने इष्टदेवका ध्यान करै फिर क्रमसे नीचे आजावे ऐसा पूर्ण अभ्यास करनेसे मुक्त अर्थात् परमात्मामें लय होजाता है इन्हीं चक्रोंके ध्यान-द्वारा भूतशुद्धि अर्थात् शरीरशुद्ध होता है और सिद्धियां प्राप्त होस-कती हैं यथा श्रीमद्भागवत ग्यारहवें स्कन्धमें जहां सिद्धियोंका वर्णन किया है कि आत्माका ध्यान अपने हृदयमें करनेसे चोलेसे चोला बदलनेकी शक्ति प्राप्त होती है अर्थात् जो हृदयका चक्र है उसका ध्यान नित्यप्रति विधिपूर्वक करनेसे ऐसी शक्ति प्राप्त होती है जिससे अन्य कायामें प्रवेश कर सके इत्यादि और प्राणायाम पूरक, कुंभक, रेचककी क्रिया करनेमें भिन्न २ मंत्र जपना होता है मंत्र यहां प्रगट

हीं किये गये जो श्रेष्ठगुरुद्वाराही सीखना उत्तम और उचित है। प्राणायाम सिद्ध होनेसे त्रिकालज्ञ तथा दीर्घायुवाला होता है जिनको प्राणायाम करनेमें सातों चक्रोंका ध्यान न करमिलै उनको इस क्रियासे ध्यान करना चाहिये प्राणायाम पूरक वामस्वरसे कर और नाभिस्थानमें श्यामवर्ण चतुर्भुज श्रीविष्णुभगवान्‌का ध्यान करना चाहिये और दोनों नाकके स्वरोंको रोककर कुंभकके समय हृदय स्थानमें अरुणवर्ण श्रीब्रह्माजीका ध्यान करै और रेचक दाहिने स्वरसे श्वास छोडते समय दोनों भृकुटीके मध्य श्वेतवर्ण सदाशिव-जीका ध्यान करना चाहिये इस क्रियाद्वाराभी अभ्यास करनेसे प्राणा-याम सिद्ध होता है एक वार बोलो श्रीसच्चिदानन्दकी जय।

प्यारे मित्रो! अभ्यास करनेसे सब कुछ होसकता है देखो नट जो कलाबाजी करता है केवल अभ्यासही करनेसे एक हाथके ऊपर सारा शरीर उल्टा टांगे रहता है इत्यादि अद्भुत खेल दिखला सकता है। अगर आपलोग जो कि नट विद्या नहीं जानते हैं क्या ऐसा करसकते हैं कदापि नहीं क्योंकि विना अभ्यास करनेके कुछ नहीं हो सकता अब प्राणायामके क्रियाको यहांपर इतनाही लिखकर अब आयुको बढानेवाली क्रियाओंको प्रगट करते हैं—

एकविंशत्सहस्राणि षट्शतान्यधिकानि च॥ अहो-रात्रेण श्वासस्य गतिः सूक्ष्मास्मृताबुधैः॥ हकारेण बाह्यर्याति सकारेण प्रविश्यते। हंसोहंसेति मंत्रं वै जीवोजपतितत्त्वतः॥ पंचभूतात्मकं दीपं शिव-स्नेहेन सेचितम्। रक्षयेत्सूर्य्यवातेन प्राणी जीवः स्थिरो भवेत्॥ मारुतं बंधयित्वा तु सूर्यं बंधयत यदि। अभ्यासाज्जीवते जीवः सूर्य-कालेऽपि वञ्चिते॥ गगनात्स्रवते चंद्रः कायपद्मं

विकासयेत् ॥ कर्मयोगसदाभ्यासादमरः शशिसंश्रयात् ॥ शशांकं वारयेद्रात्रौ दिवा वार्यो दिवाकरः । इत्यभ्यासरतो नित्यं स योगी नाऽत्र संशयः ॥ इत्यादि ॥

अहोरात्रि (दिनरात २४ घंटे) में २१६०० श्वास चलती है यह श्वासकी साधारण गति पंडितोंने कही है॰ हकारसे श्वास बाहर आती है और भीतर प्रवेश करनेमें सकारका उच्चारण होता है अर्थात् हंस हंस इस शब्दको जीव निश्चय करके नित्य जपा करता है॰ इसीको अजपा जापभी कहते हैं यहां हंस शब्दसे परमहंस परमात्मा जानना देखो यह नियम ईश्वरका सबके लिये एकही है अर्थात् २१६०० प्राणोंमें सब जगतही व्याप्त होरहा है॰ क्योंकि मेषादि मीनपर्यंत द्वादश राशियोंमें सर्व जगत् है और इन बारहों राशि अर्थात् भगण (नक्षत्रोंका समूह) कि जो कला है वहभी २१६०० हैं ६० कलाका १ अंश ३० अंशकी १ राशि १२ राशिका भगण होता है । परिश्रमके कार्यमें जैसे दौडना मैथुनादिक और निद्रावस्थामें श्वास साधारण गतिसे अधिक चलता है जिस करके आयुमें हीनता होती है और श्वास रोकनेसे कम चलती है जिस करके आयुकी वृद्धि होती है इत्यादि ।

अन्यक्रिया—पंचतत्त्वात्मक यह दीपक रूपी शरीर शिव अर्थात् प्राणरूपी तेलसे सींचा हुआ है इसको सूर्यस्वररूपी वायुसे रक्षित करनेसे प्राणी जीव स्थिर रहता है अर्थात् सूर्य (दहिना) स्वर कम चलने देवे । अन्यच्च । पहिले प्राणवायुको रोककर जो दिनमें सूर्यके स्वरको बंद करता है और रात्रिमें चन्द्रमाको बंद कर सूर्यके स्वर (दहिने स्वर) को चलने देता है ऐसा अभ्यास करनेसे बहुत दिनोंतक जीता है । अथान्यच्च । चंद्रमाका स्वर चलै तब आकाश अर्थात् मस्तकसे अमृत झरता है उससे शरीर रूपी कमल खिलता है

चन्द्रमाके आश्रय होनेसे सदा इस कर्मयोगका अभ्यास करनेसे वह नर अमर होजाता है ॥ अन्यविधि ॥ रात्रिमें चन्द्रमाके स्वरको बंद रक्खै और दिनमें सूर्यके स्वरको बंद रक्खै इस प्रकार नित्य अभ्यास करै वह योगी है इसमें संदेह नहीं ॥ अन्यविधि ॥ प्राण अपानके उदयास्तके मध्यकालमें ठहरकर ईश्वरका ध्यान करना इसका अभ्यास नित्यप्रति करनेसे आयु दीर्घ होती है प्राण अपानका उदय अस्त यह है कि श्वासका बाहर आना भीतर जाना इत्यादि आयु बढानेके निमित्त अनेक प्रकारके अभ्यास किये जाते हैं परंतु इसमें श्वासको प्रधान समझना चाहिये ॥ गोविंदाय नमो नमः ।

अब अनहद शब्द सुननेकी क्रिया लिखत हैं ॥

जैसे यथा लब्ब बंदो गोसा बंदो चश्म बंद । गर न बीनी नूरहक बरमा बिरबंद ॥ इत्यादि ॥ पूर्वोक्त सिद्धासनसे बैठकर अथवा इस प्रकारसे बैठे कि जिसमें किसी अंगमें खेद (दर्द) होनेसे ध्यानमें विघ्न न होने पावै अर्थात् आनंदपूर्वक बैठकर स्थिर चित्त होकर मुख और नेत्रोंको बंद करके अपने दोनों हाथोंके अंगूठोंसे कानोंके छिद्रोंको दबाकर अंगूठेकी बराबरवाली दो दो अगुंलियोंसे मुंदे हुए नेत्रोंको दबाकर भृकुटियोंके मध्य ध्यान लिंगाकर शिवका करनेसे प्रथम प्रकाश मालूम हुआ करेगा और मुंदे हुए कानोंसे तरह तरहके शब्द सुनाई दिया करेंगे जब तबियत घबडाने लगै तब सावधान होकर हाथोंको हटा लेवे ऐसा अभ्यास नित्यप्रति करनेसे बिना कानोंके मूंदे एकांत स्थानमें केवल ध्यानही करनेसे शब्द सुनाई दिया करैंगे यह भी मुक्ति प्राप्त करनेका मार्ग है एकांत स्थानमें स्थिर चित्त होकर ध्यान करनेसे दूरकी बातोंको कान सुन सकते हैं जैसे जिस देशमें रेल्वे स्टेशन है वहांके वासियोंको दिनमें अपने २ व्यौहारादिक कार्यौंमें लगे रहनेसे रलगाडीके चलनेकी आवाज नहीं सुन पडती है और जब

रात्रिमें स्थिर चित्त होकर चारपाईपर लेटे हुए प्रत्यक्ष सुनाइ पडता है कि इस समय रेलगाडी चली जा रही है कारण कि रात्रि समय सबके सोनेका समय है और गुलगफाड बंद होता है और उस समय ध्यानकीभी एकाग्रता होनेके कारण रेलका शब्द सुन पडता है इत्यादि और जिस समय अभ्यासीको अनहद (कान बंद करके शब्द नहीं सुनपडे) शब्द नहीं सुनपडै तो जानलेवै कि सात रोजमें शरीर छूट जावेगा अब कालज्ञान जाननेके वास्तेभी संक्षेप रीतिसे प्रगट किया जाता है इत्यादि ।

यथा-नासाग्रं भ्रूयुगं जिह्वां मुखं चैव न पश्यति ।
कर्णघोषं न जानाति स गच्छेद्यममंदिरम् ॥
नवभ्रुवं सप्तघोषं पञ्चतारा त्रिनासिकाम् । जिह्वां
दिनमेकं तु कालचिह्नं दिने दिने ॥ न यस्य
स्मरणं किंचिद्विद्यते स्तनचर्मणि । सोऽवश्यं
पंचमे मासि स्कंधारूढो भविष्यति ॥ दन्ताश्च
वृषणौ यस्य न किंचिदपि पीडयेत ॥ तृतीयमा-
सतोऽवश्य कालाज्ञायां भवेन्नरः ॥ इत्यादि ।

अर्थात् नासिकाका अग्रभाग दोनों भ्रुकुटी जिह्वा मुख इन्होंको जो न देखै और कानोंमें घुंघुंहाहट शब्द न सुन पडै वह यमराजके यहां पहुँचता है यथा जो अपनी भ्रुकुटियोंको न देख सके तो नव (दिन) रोजमें मृत्युको प्राप्त हो और जो कानोंको बंद करनेसे घुंघुंहाहट शब्द न सुनपडे तो सात दिनमें मृत्यु जाननी और ध्रुवादि ताराको न देख सके तो पांच दिनमें मृत्यु जाननी और नासिकाका अग्र भाग न देख पडनेसे तीन रोजमें और जिह्वाका अग्रभाग न देख पड-नेसे एक दिनमें मृत्यु जाननी । जिसको चूंची (स्तनों) का चर्म दबानेसे दर्द न मालूम हो अर्थात् बधिर होजावे वह निश्चय पांचवें

महीनेमें मृत्युको प्राप्त होता है और जिसके दाँतोंमें कुछ पीडा मालूम नहीं हो और अंडकोषमें कुछ चुभोनेकीसी पीडा मालूम नहीं हो शून्य अर्थात् बहिरी हो जावे तो वह मनुष्य निश्चय करके तीसरे महीनेमें मरजाता है इत्यादि। अब मोक्ष साधनके कुछ और नियम प्रगट करते हैं संसारादिक मिथ्याज्ञानको त्यागकर सत्यज्ञान-की प्राप्ति करना चाहिये क्योंकि "ऋते ज्ञानान्मुक्तिः स्यादानन्दो दुःख-वर्जितम्॥" जब मिथ्याज्ञानकी निवृत्ति हो जाती है तब दोष अर्थात रागद्वेषकीभी निवृत्ति होजाती है और जब रागद्वेष नहीं रहता है तब संसारादिक किसी वस्तुमें आसक्ति नहीं होती प्रवृत्ति दूर होजाती है और जब प्रवृत्ति दूर होजाती है तब जन्म नहीं होता क्योंकि मनकी कल्पनाहीसे जन्म होता है जब मनके संकल्प विकल्पहीका त्याग होगया फिरजन्म क्योंकर हो और जब जन्म नहीं हो तब दुःख भी नहीं होता अर्थात् परब्रह्म परमात्मामें लय हो जाता है निरीछा होकर आत्मा परमात्मामें लय हो जाता है और अपनी इच्छा करिके ही जीव जन्मताहै और इसी प्रकार परमात्मा साकार होकर (रामकृष्णादि होकर) प्रगट होताहै और निराकार होकर गुप्त हुआ करता है सर्वत्र उसकाही प्रकाश हो रहा है और देखिये यह सबही जानते हैं कि एक दिन शरीर अवश्य छूटेगा और जब शरीर छूटेगा तब सब विषय एकदम छूटनेसे बडा दुःख देवेंगे इससे उचित यह है कि सब विषयोंको क्रमक्रमसे पहिलेहीसे त्याग कर देवै जैसे कोई अफीमके खानेवालेको एक दिन अफीम नहीं मिले तो उसको बडा दुःख होता है और अगर क्रमक्रमसे घटा ता जावै तो उस अफीमका खानाही त्याग कर सकता है जिसके न मिलनेसे खेदको प्राप्त होता इत्यादि। यह जरूरत नहीं है कि गृहस्था-श्रमही त्यागकर वनमें चला जावे सिर्फ अपनी तबियतको सब विष-योंसे हटानाही वनमें जाना है क्यों कि घर छोडकर वनमें गये और वहां कोई चन्द्रमुखी यौवनवतीको देखकर उसमें आसक्त हो गये तो

वनमें जानेसे क्या और घरहीमें रहनेसे सब पदार्थ पास होनेपर भी उनमें आसक्त न होनेवालेको वनमें जानेकी जरूरतही क्या इत्यादि॥ अब और सुनिये प्रकाश रूपी जो आत्मा व्याप्त हो रहा है उसको कुछ दुःख प्राप्त नहींहोता,जैसे सूर्य अथवा दीपकके प्रकाशमें जो कार्य किये जाते हैं उनका शोक या आनंद सूर्य अथवा दीपकको नहीं होता है और जब दीपक बुझा दिया जावे तो अंधेरेमें कुछ कार्य नहीं कर सकते और यह भी नहीं दीखपडता कि प्रकाश कहां चला गया जैसे प्रकाशरूपी आत्मा जब शरीरसे निकल जाता है तब शरीरसे कुछ काम नहीं कर सकते और आत्मा जाता हुआ दीख नहीं पडता इत्यादि । सब वस्तुमें निराकार साकार मौजूद है जैसे दियासलाईमें अग्नि निराकाररूपसे व्याप्त है परंतु उसमें जलानेकी शक्ति नहीं है जब अग्नि साकाररूपसे प्रगट होता है तब जलानेकी शक्ति होती है मिश्रीको पानीमें गला देनेसे मिश्रीका आकार जलमें लय हो जाता है और जल पिलानेसे मुखइन्द्री द्वारा ज्ञान होजाता है कि इसमें मिश्री मिली है परंतु दश या बीस सेर जलमें मिश्री अथवा दूध पावभर मिलाकर पिलानेसे दूधका ज्ञान नहीं होता है और कहाभी जावे कि जलमें दूध है तोभी नहीं मानेगा किन्तु जलको अग्निपर चढाकर जलानेसे बरतनमें कुछ दूध अवश्य रहजावेगा इत्यादि सुनो प्यारे मित्रो ! ज्ञानी पुरुष करता हुआभी कुछ नहीं करता क्योंकि अंतःकरण शुद्ध होनेसे भीतरके मन (अंतरंग) से वह जानता है कि मैं कुछ नहीं करता इस हेतु पाप पुण्य नहीं चाहता अथवा विषयोंका फल उसको कुछ नहीं होता है क्योंकि यह जानता है कि आत्मा कुछ नहीं करता है. परंतु अज्ञानी मनुष्य पापकर्म करने अथवा पुण्यकर्म करनेसे आत्माको भोक्ता जानकर जानता है कि इसका फल मुझको अवश्य मिलेगा इसी कारण उसे शुभाशुभ फल मिलते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि यह जाने कि फल तो है ही नहीं अर्थात् आत्मा तो कुछ करताही नहीं ऐसा

जानकर बुरे काम करने लगै. अबतक जो अभ्यासादिक कहे गये हैं किसी उत्तम गुरुद्वारा उनका क्रम जान लेना उचित है. विशेष करके प्राणा यामको प्रथम गुरुद्वारा जानकर करना चाहिये दूसरे जो इस विद्याके योग्य होवे उन्हींको करना चाहिये वास्तवमें इस विद्या पर मन उन्हींका होगा जिनको ईश्वरने इस विद्याके योग्य बनाया है, अन्यको यह विद्या अप्रिय होगी अथवा इस पर उनको विश्वासही नहीं होगा ॥

मेस्मेरिज़्म और स्प्रिचुआलिज्म विद्या जिसका वर्णन पहिले करचुके हैं यह नवीन विद्या नहीं है; यह विद्या प्राचीन है. कुछ पौराणिक प्रमाण सुनिये जिस समय श्रीरामचन्द्रजी वनमें मृग मारने गये थे पीछेसे श्रीलक्ष्मणजी सीताजीको अकेली छोडकर सीताजीके चारों तरफ एक लकीर खींचकर गये थे लकीर खींचनेका तात्पर्य यह था कि इसके भीतर कोई नहीं आने पावै यह मेस्मेरिज़्म शक्तिही थी और सुनिये भोजन करते समय चौकामें लकीर खींचकर भोजन करनेकाभी यही तात्पर्य्य है कि किसीकी दृष्टि अथवा कोई विघ्न न होवे और संध्योपासन करनेमें गायत्रीसे जलको अभिमंत्रित करके अपने चारों तरफ घुमाया जाता है उसका भी तात्पर्य पूर्ववत् है और मुसलमानभी हिंसार खींचकर अमलियात किया करते हैं इत्यादि मुक्तात्माओंके बुलानेके प्रमाण सुनिये श्रीमहाभारत पुराणमें लिखा है कि - गाधारीके सौ पुत्र जब लडाईमें मारेगये थे उस समय शोकयुक्त गांधारीको श्रीव्यासजीने योग बलसे मरेहुये पुत्रोंको पितृलोकसे बुलाकर प्रत्यक्ष दिखलाकर गांधारीका शोक दूर कर दिया इत्यादि बहुतसे प्रमाणही लिखकर पुस्तक बढाना उचित नहीं है अब इस विद्याके विषयको समाप्त करके और कुछ विषय लिखते हैं. गोविंदायनमो नमः ।

पृथ्वी नहीं घूमती है अर्थात् अचल है नक्षत्रचक्र भ्रमण करनेसे दिन और रात्रि होती है पृथ्वी अचल होनेके विषयमें सनातनधर्म्मी

महोपदेशक श्रीपंडितज्वालाप्रसादादि विद्वज्जनोंने वेदके मंत्रभी लिखे हैं. मैं यहां सूर्यसिद्धांत जो प्राचीनमाननीय ग्रंथ हैं केवल उसीके प्रमाण सहित उस विषयको समझाताहूं. वास्तवमें विद्याका लोप होजानेसे सिद्धांतोंकी गूढ बातोंका रहस्य बिना परिश्रम किये कैसे मालूम हो जैसे किसी साधारण पंडितसे पूंछा जावे कि पृथ्वी घूमती है कि नहीं तो उसका उत्तर तो ठीक देवैंगे कि हमारे प्राचीन मुनियोंने पृथ्वीको अचला कहा है अर्थात् पृथ्वी नहीं घूमती है जब उनसे यह पूछा जावे कि पृथ्वी नहीं घूमती तो रात दिन किस प्रकार होता है तो ठीक २ समझा नहीं सकते, कारण कि सिद्धांत विद्याको नहीं जानते अब एकाग्रचित्त होकर जरा इधर ध्यान दीजिये. (सू० सि० अध्याय १२ श्लोक ९) सबसे ऊपर ब्रह्माण्ड कक्षा घेरा हल्का है जो १८७१२०८०६६४००००० योजन है उससे बहुत नीचे (तादाद सूर्य्य सिद्धांतमें विस्तारपूर्वक है) नक्षत्रकक्षा है जो २५९८९००१२ योजन है. (सू. सि. अ. १२ श्लोक ८५ से ८९ तक) सूर्य्यादि ग्रहोंकी कक्षा लिखनेसे कोई प्रयोजन नहीं है. आकाशके मध्य भूगोल स्थित है. भूपरिधि ५०६० योजन बीचों बीचमें है. अपने २ स्थानमें भूपरिधिमें अंतर हो जाता है जैसे शाहजहांपुरकी भूपरिधि ४४८७ योजन है. नक्षत्रचक्र सहित ग्रहकी कक्षाओं और ग्रहके उत्तर अर्थात् देवलोकमें सव्य अर्थात् दक्षिणसे वाममें (जैसे कोई चक्कीका पीसनेवाला अपने दाहिने हाथसे पेटकी तरफ होकर वाम हाथकी तरफ होता हुआ चक्की घुमाता है.) और दक्षिण अर्थात् दैत्य लोकमें अपसव्य अर्थात् वामसे दक्षिण और निरक्ष देश अर्थात् मध्यमें जैसे लंकामें मस्तकोर्ध्व पूर्वसे पश्चिम नित्य भचक्र भ्रमण किया करता है और अश्विनी आदि सब नक्षत्र दक्षिण उत्तरको हटेहुये पूर्वकी तरफको क्रमानुसार हैं इस कारण सब ग्रह अपनी २ कक्षामें पूर्वकी तरफको चला करते हैं सब ग्रहोंके युक्त नक्षत्रचक्र

२४ घंटोंमें जहांका तहां आजाता है. इस कारण रात दिन हुआ करता है. पृथ्वी नहीं चलती है. यथा (सू. सि. अ. १२ श्लोक ५५ व ७३) ।

सव्यं भ्रमति देवानामपसव्यं सुरद्विषाम् ।
उपरिष्टाद्भगोलोऽयं व्यक्षे पश्चान्मुखः सदा ॥
भचक्रं ध्रुवयोर्बद्धमाक्षिप्तं प्रवहानिलैः ।
पर्येत्यजस्रं तन्नद्धा ग्रहकक्षायथाक्रमम् ॥

पृथ्वीके अचल होनेमें कोई यह शंका करैंगेकि अंगरेजी भूगोलमें तो पृथ्वी का घूमना लिखा है सो ठीक है और अंगरेजोंसे बढकर विद्याकी खोज करनेवाला इस समय कोई नजर नहीं आता और इनको धन्यवाद देना चाहिये क्योंकि अगर प्रेस आदिक यंत्र प्रगट न किये होते तो वास्तवमें बहुतसे ग्रन्थभी नहीं देखनेमें आते परन्तु इस विषयमें मेरी समझमें यह बात आती है कि गणितप्रकारमें जो सरल क्रम होता है यह लोग उसीको ग्रहण करते हैं नक्षत्र चक्र भ्रमणमें समस्त ग्रहोंका-नक्षत्रचक्रके साथ घूमना है, इस हेतुके केवल पृथ्वीको भ्रमण करना माना है तात्पर्य यह कि नक्षत्रगोल अथवा भूगोल इन दोनोंमेंसे कोईभी भ्रमण करै परंतु फल दोनोंका एकही अर्थात् रातदिनका होना है गणितमें कोई बालभरभी अंतर नहीं पडता जैसे हमारे चारों तरफ आदमियोंका चक्र खडा हो और वह चारों तरफसे भ्रमण करै तो हम उन सबको देख सकते हैं अथवा हम बीचमें खडे हुये भ्रमण कर जावैं तो भी सबको देख सकते हैं जब हमारे प्राचीन सिद्धांतोंमें भूगोलका घूमना और भूगोलको अचल लिखा है और गणितमें भी अंतर नहीं पडता जिसके गणितको हम सब मानते हैं तो पृथ्वीको अचला मानना चाहिये द्वितीयतः मेघके बादल जो चन्द्रमासे बहुत नीचे होते हैं उनकी गति पूर्व और पश्चिमादिकी ओर वायुके कारण

क्षमान ही दिखलाई देती है यदि पृथ्वी घूमती होती तो बादलकी गति पूर्वकी ओर बहुत न्यून गति अथवा बिलकुल नहीं दिखलाई देती। जैसे नक्षत्र चक्रके घूमनेसे सूर्य चन्द्रादिक ग्रह पूर्वकी ओर चलते हुए भी पश्चिमकी ओर गमन करते दिखलाई देते हैं इसी प्रकार बादल पूर्वकी ओर चलते हुए भी यदि पृथ्वी घूमती होती तौ बादलकी गति पूर्वकी ओर बहुतही न्यून अथवा गति बिल्कुल नहीं दिखलाई देती। यह यथार्थ सिद्धांत है विद्वान् लोग स्वानुभव न्यायपूर्वक भले प्रकार विचार कर पृथ्वीको अचला जान सकेंगे जैसा ऋषियोंने लिखा हमारे प्राचीन किसी ऋषिने पृथ्वीको घूमनेवाली नहीं बतलाया है ॥ एक बार बोलो श्रीराधाकृष्णकी जय॥ अब अहोरात्रमान अर्थात् दिन रात किस प्रकार घटता बढता है सो प्रकार प्रगट करते हैं॥ निरक्ष देश अर्थात् लंकामें सदा ३० घटीका दिन और ३० घटीकी रात होती है वृद्धिहानि नहीं होती, कारण कि वहां अक्षभी नहीं है क्योंकि ठीक बीच स्थानमें होनेके कारण सूर्य ठीक मस्तक पर रहता है सिर्फ थोडासा उत्तर दक्षिणकी तरफ सूर्य हटता है जिससे वृद्धिहानि नहीं होसकती निरक्षस्थानसे उत्तर या दक्षिण अहोरात्रमान घटता बढता है जब उत्तरमें दिनकी वृद्धि होती है तब दक्षिणमें रात्रिकी वृद्धि होती है, इत्यादि जिस दिन सूर्य अयनांशः सहित शून्यराश्यादिकके हों उसदिन मध्याह्न समय १२ अंगुलका शंकुसमान भूमिमें खडा करै उसकी छाया उत्तर या दक्षिण जितने अंगुल प्रति अंगुल होवै वही पलभा (अक्षप्रभा) उस देशके होते हैं जो छाया उत्तर होवै तो उस देशसे दक्षिण निरक्ष देश समझना चाहिये जो छाया दक्षिण होवै तौ निरक्षदेश उत्तर समझना चाहिये (एक बडा बांस लेकर उसके बारह १२ अंगुलमें समझकर उसकी छाया नापनेसे प्रति अंगुल सरलतासे जाने जावेंगे यह युक्ति है) एक अंगुलमें साठ६० प्रति अंगुल समझना चाहिये पलभाको १० से गुणकर जो गुणनफल हो सो प्रथम चरखंड और ८ से गुणकर जो गुणनफल हो सो द्वितीय

चरखंड और प्रथम चरखंडमें तीनका भाग देकर जो लब्धि होवे सो तृतीय चरखंड इस प्रकार यह तीन चरखंड होते हैं लंकोदय लग्न प्रमाण इस प्रकार है मेष २७८पल, वृष २९९ पल, मिथुन ३२३ पल, कर्क ३२३ पल, सिंह २९९ पल, कन्या २७८ पल, तुला २७८ पल, वृश्चिक २९९ पल, धन ३२३ पल, मकर ३२३ पल, कुंभ २९९ पल, और मीन २७८ पल, हैं. लंकोदय लग्न प्रमाणमें चरखंडोंका संस्कार करनेसे स्वदेशीय लग्नप्रमाण होता है पूर्वोक्त तीनों चरखंडोंके अंगुलात्मकको पलात्मक मानकर लंकोदय प्रमाण मेष वृष मिथुनके पलोंमें क्रमानुसार तीनों चरखंडोंको घटा देवे फिर कर्क सिंह कन्या लंकोदय मानमें पूर्वोक्त तीनों चरखंडोंको उलटे क्रमसे जोड देवे जो लंकासे अपना देश उत्तरमें होवै तौ इस प्रकार करै यदि लंकासे अपना देश दक्षिणमें होय तौ विपरीत संस्कार करै अर्थात् जोडनेकी जगह घटावै, घटानेके स्थानमें जोडै ऐसा करनेसे स्वदेशीय मेषसे कन्यातक लग्नप्रमाण होता है. फिर उलटे क्रमसे अर्थात् कन्यासे मेषतकके प्रमाणको तुलासे मीनपर्यंत समझे इस प्रकार मेषादि मीनपर्यंत बारहों लग्नोंके प्रमाण अपने नगरके होजावैंगे जिस दिन अयनांश सहित सूर्य शून्य राश्यादिकके हों उस दिन दिनरात्रि बराबर तीस (३०) घटीका होता है और पूर्वोक्त प्रथम चरखंड पलात्मक द्विगुण एक मासतकमें अर्थात् सायन वृषके संक्रमण दिनतक दिनमान बढजावैगा फिर द्वितीय चरखंड पलात्मक द्विगुण एक मासतकमें अर्थात् सायन मिथुनसंक्रमण दिनतक और दिनमान बढैगा फिर तृतीय चरखंड पलात्मक द्विगुण एक मासतकमें अर्थात् सायन कर्क संक्रमण दिनतक और दिनमान बढजाता है बस यहांतक दिन मान बढता है फिर विपरीत क्रमसे घटता हुआ सायन तुला रविसंक्रमण दिनको फिर ३० घटी शून्यपलका होकर फिर क्रमानुसार घटता हुआ सायन रवि मकर संक्रमणतक घटता है फिर क्रमानुसार बढता हुआ सायन रवि मेषसंक्र-

मण दिनमें फिर घटी ३० पल० अर्थात् बराबर होजाता है पूर्वोक्त क्रमसे बारंबार घटता बढता रहता है तात्पर्य यह है कि पूर्वोक्त तीनों चरखडोंके पलात्मकको जोडकर दूना करनेसे जो घटी पल हों उसी कदर दिनमान ३० घटीसे अधिक होकर बढता और उसी कदर ३० घटीसे कम होकर उस देशमें घटता है अन्यथा नहीं दिनमानको ६० घटीमें घटानेसे रात्रिमान होता है और जिस देशमें पलभा अधिक होते हैं उस देशमें दिनमान अधिक बढता घटता है० पलभा कम होनेसे कम यथा पलभा ३ । ० होनेसे २ घटी ८ पल तक दिनमान घटता बढता है इत्यादि बहुतसी गूढ बातें ऐसी हैं जिनको अविद्याके कारण साधारण मनुष्य नहीं जान सकते हैं अगर किसी साधारण पंडितसे प्रश्न किया जावे कि यह जो अयनांश आप लग्नग्रहमें जोडकर सायन बनाते हो यह क्यों जोडते हो और क्या है इसका उत्तर यही मिलताहै कि हमारे गुरूजीभी इसी प्रकार जोडते थे और हमभी अयनांश जोडते हैं परंतु यह नहीं जानते हैं कि इसके जोडनेसे क्या प्रयोजन है और यह क्या है० अगर कोई कहै कि जब जानते नहीं तो यह फजूल है मत जोडा करो और यह उपदेश समझमें आजावे और अयनांश न जोडा जावे तो गणितमें बडा अंतर होजावे जैसे मूर्तिपूजन आदिका प्रयोजन ठीक जाने विना प्राचीन कर्म्मोंका त्याग होनेसे क्या कुछ अंतर नहीं पडेगा अवश्य पडेगा० सुनिये जबसे इसका त्याग होता जाताहै धर्म्मका नाश होता जाता है और रोगादिकसे कष्ट प्राप्त होताहै सो प्रत्यक्ष है क्योंकि ऐसी बीमारियां पहिले नहीं हुई थीं जोकि बूढोंकी जबानी मालूम होती है कि हमने ऐसी बीमारियां पहिले नहीं सुनी थी सो अब प्रचलित हो रही हैं इत्यादि अयनांशोंके विषयमें (सू०सि०अ०२ श्लो०९२१० श्लो० ९ व १० में विस्तारसे लिखा है जिसको जानना हो सो देखलेवै बहुतसे मनुष्य जो समाजी हैं कहते हैं कि सूर्यादिक ग्रह जड हैं कुछ शुभाशुभ फल नहीं कर सकते हैं इसलिये ज्योतिषके गणितको

सत्य और फलितको असत्य मानते हैं इसलिये हम अब समझाते हैं कि ज्योतिषका फल किस प्रकार होताहै ब्रह्माण्ड कक्षासे लेकर नीचे पृथ्वी पर्यंत जो वायु है वह सर्वत्र व्याप्त ऐसी जग नहीं जहां वायुकी गति न होवै वायु वायु सब परस्पर मिली हुई है जैसे सूर्यका किरणें सर्वत्र व्याप्त हो रही हैं इसी प्रकार सर्व ग्रहोंका असर (गुण) उतरता हुआ पृथ्वीपर आता है पृथ्वीसे जो कुछ गुण (असर) होता है जैसे मनुष्यके दाहिने अंगसे बिजलीकी शक्ति निकलकर वायुमें मिलकर ऊपर चली जाती है इस भांति शुभाशुभ फल मनुष्यको हुआ करता है इस बात पर यह शंका होगी कि सबको समान फल क्यों नहीं होता इसके उत्तर तो बहुत हैं कि सब आदमियोंकी शकल इत्यादि एकसी क्यों नहीं होती ? दूसरी बात यह है कि टेलीग्राफकी बिजलीकी बेटरी हर डाकखानोंमें रहती है जिसकी शक्तिसे तार खटकानेसे जहां जहां तार मिलकर बेटरी रक्खी है तार शब्द देता है और किसीके घरमें तारका शब्द क्यों नहीं होता ? अब बिना तार गाडे खबर आनेका और क्रिया निकली है यह क्रिया कहीं कहीं जारीभी होगई है फिर ईश्वरीय कारीगरीकी बराबरी कौन कर सकता है? एकही दिनमें हजारोंका जन्म होता होगा और हजारों शरीरका त्याग एकही दिनमें करते होंगे जैसी जैसी जिसकी धातु होती है वैसाही उसको फल होता है और एक छोटी बात ध्यान देकर सुनिये किसी स्थानमें मैला या बुरी वस्तु जो प्रत्यक्ष जड वस्तु है, पडी हो तो उसकी दुर्गंध वायुमें मिलकर दिमागको कैसा खराब करदेती है और इतर आदिकी सुगंध वायुमें मिलकर दिमागको तर और तबियतको आनंदफल देती है फिर समझनेकी बात है कि ईश्वरकी शक्तियां कैसी होंगी क्या सूर्यमें शक्ति नहीं है महा भूलकी बात है जो सूर्यादिक ग्रहोंको अशक्त समझें दूसरी बात यह कि मैंने इस ज्योतिष विद्याकी स्वयं परीक्षाकी और गणित फलित दोनों सीखे हैं बहुतसी बातें जन्म पत्र देखकर शर्तिया बतलाई जाती हैं जो ठीक होती हैं ।

एक पुस्तक गंगाधर विज्ञानविचित्र सारिणी नामक हालहीमें मैने तैयार की है जो छपनेवाली है इसकी विचित्रिता देखनेहीसे ज्ञात होगी पुस्तकके अंतमें भूमिका पर नजर डालियेगा जो कुछ प्राचीन मुनियोंने लिखा है सब ठीक है उनको प्रत्यक्ष न देखकर बहुतसे मनुष्य उनका खंडन करते हैं और उनके सदृश आप बुद्धिमान् बनते हैं कारणकी उतनी विद्याकी खोज नहीं करते हैं दूसरे यह कि प्राचीन ऋषियों मुनियोंने यहभी लिखा है कि कलियुगमें धर्म नाशको प्राप्त होवेगा और अधर्म्मीजन अधिक उत्पन्न होवेंगे यही कारण है कि बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि पितरोंका श्राद्ध करना फजूल अर्थात् निरर्थक है पितरोंको तर्पण करनेसे क्या तर्पणका जल पितरोंको पहुँच जाता है ? ऐसी ऐसी बातोंका खंडन करते और तर्पणादिक कर्मोंका त्याग करते हैं जिसका फल दुःख होता है जैसे महामारी बीमारीने अनेक घरोंका सत्यानाश करडाला है क्योंकि संध्या तर्पणादि कर्मका त्यागदेनेका यही फल प्रत्यक्ष है अब इस विषयको कहते हैं कि तर्पणका जल पितरोंको अवश्य पहुँचता है सुनिये प्रायः यह तो सबही जानते हैं कि जल वायुमें मिलकर ऊपर चला जाता है और आकाशपर्य्यंत सब वायु मिली हुई हैं जैसी गीली धोतीका जल वायु द्वारा ऊपर चलागया तब धोती सूखगई इत्यादि और वायुसे जल बना लिया जाता है भाफद्वारा अर्क निकाले जाते हैं इत्यादि इस प्रकार पितरोंको तर्पणका जल अवश्य वायुद्वारा ऊपर पितृलोकमें पहुँच जाता है सूर्यसिद्धांतमें पितृलोकको चन्द्रमासे ऊंचे स्थानमें बतलाया है और उसी पितृको जल मिलता है कि जिसके नामसे जल दिया गया हो जैसे यज्ञादिक कर्ममें देवतोंका आवाहन मंत्रद्वारा करनेसे देवता आजाते थे यह तो प्राचीन प्रमाण है अगर कोई शंका करे कि यहांसे मंत्रद्वारा आवाहन करनेसे देवता कैसे सुन लेते कि हमको बुलाया जाता है उत्तर यहहै कि शब्द भी वायुद्वारा ऊपर पहुँचजाता है और हवन करनेसेभी सुगन्ध वायुद्वारा ऊपर पहुँच जाती है यथा-

तुलसी हाय गरीबकी, सात स्वर्गलौं जाय ।
मरे चामकी धौंकनी, लोह भस्म होजाय ॥

अर्थात् जितनी कहावत हैं वे सब सत्य हैं केवल अपने भ्रमसे और उतनी बुद्धि न होनेसे असत्य मालूम होती है जैसे पहिले फोनो-ग्राफ बाजा प्रचलित नहीं हुआ था उस समय कोई अपने प्यारेसे कहता है कि प्यारे हम तेरी रसीली आवाज एक यन्त्रमें भरकर रख छोडेंगे और जहां चाहैंगे तहां तेरी रसीली प्रिय ध्वनि सुना करेंगे। उस समय ऐसी बातोंको कोई सत्य नहीं मानत और यह कहा जाता कि पागल होगया है भला कहीं ऐसा होसकता है ? फोनोग्राफ बाजा ऐसा प्रचलित हुआ है कि जिसकी आवाज चाहे भरकर सुना करै तब सबको सत्य प्रतीत होनेलगा है और सुनिये जब टेलीग्राफ (तार) नहीं प्रचलित हुआ होगा तब सुननेमें आता होवेगा कि एक क्रिया ऐसी निकाली जायगी जिसके द्वारा हजारों कोस दूरकी बात यथार्थ पल-मात्रमें जानी जाया करेगी उस समय बडा आश्चर्य मालूम होता होगा और यह बात असंभव मालूम होती होगी और जब प्रचलित होगया तब सबको सत्य प्रतीत होने लगा इत्यादि फिर भला ईश्वरीय यंत्र नहीं मालूम किस २ प्रकारके होवेंगे सबही कुछ संभव है केवल अपनी बुद्धि यथार्थ न पहुँचनेसे असंभव कहा जाता है यह महाभूल है बहुत बातें विना विद्याके जाननेसे गूढतत्त्वका यथार्थ ज्ञान नहीं होता है इत्यादि हम किसीका खण्डन नहीं करते परन्तु इतनी बात अवश्य कहते हैं कि जो कुछभी प्राचीन मुनियोंने लिखा है वह सब सत्य है बाल बराबरभी अन्तर नहीं है विद्याद्वारा खोज करनेसे मालूम होजा-वेगा जैसे कोई बात असत्य अथवा असंभव मालूम हो तो उसकी खोज करे कि अमुक बात क्यों कही गई ? इस प्रकार दृढतापूर्वक खोज करनेसे उसका सारांश अवश्य मालूम होजावेगा इत्यादि ॥

अब क्षत्री (खत्री) विषयमें कुछ लिखकर शब्दकी एकता समझावेंगे समस्त पृथ्वीभरमें अनेक देशोंमें जो कुछ मनुष्य हैं ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र चतुर्वर्णोंहीमें हैं फिर उन ब्राह्मणोंमें भी कई प्रकारके और अपने २ देशके प्रभावसे कुलरीति तथा उपाधियां भी भिन्न २ होनेपर वे सब ब्राह्मण हैं उसी प्रकार क्षत्री भिन्न २ देशोंमें रहते हुए कुलरीति तथा उपाधियां भिन्न २ अनेक प्रकारकी होगयीं जिन सबका ठीक २ जानना कठिन है. खत्री (क्षत्री) पंजाबमें विशेषतया रहते थे राजा रघु आदि और भी राजा इनके प्राचीन-वंशमें हुए हैं यदि विशेष देखना हो तो " खत्रीजातिनिर्णय " नामक पुस्तक पं० श्यामसुन्दर कपूरिया वैद्य बानवाली गली चौक लखनऊकी रचित मंगवाकर देखलें पहिले नामके अंतमें सिंह शब्द नहीं लिखा जाता था जैसा कि अब क्षत्रीठाकुर नामके अंतमें सिंह जोडते हैं अतः जबसे क्षत्री ठाकुर लोगोंने सिंह शब्द (कहीं कहीं अब भी सिंह शब्द नहीं लिखते हैं देशरीतिकी बात है) नाममें लिखना आरम्भ किया उसी समयसे क्षत्री (खत्री) महाशयोंने नामके अंतमें मल्ल शब्द जोडना आरंभ किया जैसे टोडरमल्ल अब भी नामके अंतमें मल्ल लिखा जाता है परन्तु इसका रिवाज कम है मल्ल उस पहिलवानको कहते थे कि जो दो शेरको पकड कर लडा देवे इसमें बहुतसी बातें देश रीतिसे सम्मिलित हो जाया करती हैं खत्री शुद्ध क्षत्री है तथापि भ्रमवश अज्ञानतासे कुछ महाशय क्षत्री (खत्री) जातिपर आक्षेप किया करते हैं एक प्राचीन कहावत है कि अंतिम समय जब परशुरामजीने क्षत्रियोंका वध किया तब दो गर्भवती स्त्रियां भागकर ऋषिकी कुटीपर गयीं जो कि सारस्वत ब्राह्मणथे जब परशुराम वहांभी उनको मारनेके वास्ते पहुँचे और स्त्रियोंको मारना चाहा तो ऋषिने कहा कि यह मेरी कन्यायें हैं इनको क्यों मारते हो ? तब

परशुरामजीने कहा यदि आपकी कन्यायें हैं तो इनका बनाया हुआ कच्चा भोजन आप मेरे सामने ग्रहण करके मेरे संदेहको दूर करें तब ऋषिजीने कन्याओंसे कच्ची रसोई बनवाकर आनन्दसे भोजन करके उन कन्याओंके प्राण बचाये उन कन्याओंके गर्भसे सन्तान होकर वृद्धि हुई और विशेष तथा पंजाबमें रहने लगे और तभीसे सारस्वत ब्राह्मणको अपना रक्षक जानकर अपना पुरोहित बनाया सारस्वत सिवाय खत्रीके दूसरेका धान्य दानादि नहीं लेते हैं और अपने यजमानके घर कच्ची रसोईका भोजन कर सकते हैं (अब कहीं २ कच्चा भोजन नहीं करते) इस समयभी मेरे पुरोहितजी मेरें घरका कच्चा भोजन बनाया हुआ बराबर ग्रहण करते हैं अर्थात् खत्रियोंको छोडकर अन्य प्रकारके अनेक क्षत्री हैं, किसी क्षत्रीकी बनाई कच्ची रसोई कोई ब्राह्मण ग्रहण नहीं करसकता है अतः खत्री शुद्ध क्षत्री हैं और खत्रियोंके पुरोहित सारस्वतका होना, भविष्योत्तर पुराणमेंभी लिखा है यथा।

"सारस्वतास्तु ये विप्राः क्षत्रियाणां पुरोहिताः ॥"

इत्यादि ॥ और यहभी देखनेमें आता है कि खत्री शहरों और कस्बोंहीमें रहते हैं गांव देहातमें खत्री नहीं बसते हैं और बसतेभी होंगे तो बहुत कम और न्यून कुलवाले होंगे इत्यादि अब इस विषयको अधिक नहीं बढाकर क्षत्री और खत्री शब्दकी एकता समझाते हैं 'क्ष' और 'ज्ञ' यह दोनों युक्ताक्षर हैं अर्थात् क्+ष् = क्ष और ज्+ञ्=ज्ञ क् ष् मिलकर क्ष और ज् ञ् मिलकर ज्ञ होता है सो किसी २ देशमें क्ष को ख भी उच्चारण करते हैं और ज्ञ को इस देशमें विशेषतया 'ग्या' से उच्चारण करते हैं और कहीं२शुद्ध उच्चारण ज आदिसे करते हैं 'ज्ञान' को 'ग्यान' उच्चारण करते हैं इसी प्रकार क्षत्री शब्द लिखा रहनेपर भी खत्री उच्चारण कर सकते हैं । वास्तवमें इनका शुद्ध उच्चारण ज्यान (ज्यांन) और क्षत्री (क्षत्री = क्ष्त्री) चाहिये बोलचालका व्यवहार है इसी प्रकारके कुछ शब्द निम्न लिखित दिखलाये जाते हैं यथा क्षत्री = खत्री. क्षेमराज = खेमराज. एक लक्ष =

एक लख. यवाक्षार = यवाखार. क्षेत्र = खेत. क्षारी = खारी. साक्षी साखी. दक्षिण = दक्खिन. एकाक्षी = एकआंखी. रक्षाबन्धन राखीबांधना. पक्ष = पंख पक्ष = पाख. भक्ष = भख. नक्षत्र = नखत. लक्ष्मण = लखन. अंगरक्षा = अंगरखा = इत्यादि २६ भाषामें लक्ष्मीचन्द्र (लक्ष्मीचन्द) लिखनेसे लखमीचन्द भीपढा जा सकता है यदि कोई व्याकरणके सूत्रोंसे सिद्ध करना चाहे तो असम्भव मालूम होता है । इतना अवश्य है कि क् ष् मिलकर क्ष होता है इसमें प्रथमाक्षर (क) ख. का सूर्य सर्ग है. परन्तु ज् ञ् मिलकर ज्ञ अक्षर होता है जिसका शुद्ध उच्चारण ज आदिसे चाहिये किन्तु ग आदिसे उच्चारण अधिकतया किया जाता है सो भिन्नवर्गी है. अर्थात् जका स्थान तालु है और गका उच्चारणस्थान कंठ है सवर्गी न होते हुए भी जब ज्ञाको ग्या उच्चारण करते हैं तब सवर्गी क्ष को ख उच्चारणमें कोई दोष नहीं है ० यह विषय खत्रीमात्रको अवश्यही जानने योग्य है दूसरा अक्षर ष है इसको भी ख उच्चारण करते और स भी उच्चारण करते हैं जैसे षट्को शट् और खट् दोनों प्रकारसे उच्चारण किया जाता है ॥

संतमतका संक्षिप्त वर्णन.

प्रिय पाठकगणो ! मुझे संतमहात्माओंकी पुस्तकें देखनेमें तथा उनके दर्शन करनेमें विशेष रुचि होनेसे मैंने कुछ महात्माओंकी रचित पुस्तकें देखीं यथा. महात्मा श्रीगुरुनानकदेव १, कबीरसाहब २, सूरदार ३, सुन्दरदास ४, रैदासजी ५, दादू साहब ६, बाबा मलूकदास ७, धनी धरमदास ८, यारी साहब ९, दरियासाहब बिहारवाले १०, दरियासाहबमारवाडवाले ११, गुसाईं तुलसीदासजी १२, तुलसीसाहब हाथरसवाले १३, बुल्ला साहब १४, बुल्लेशाह १५, पलटू साहब १६, जग जीवन साहब १७, दूलनदासजी १८, केशवदा-

सजी १९, गरीबदासजी २०, गुलाल साहब २१, भीखा साहब २२, चरणदासजी २३, धरनीदासजी २४, पीपाजी २५, नामदेवजी २६, सदनाजी २७, स्वामी हरिदासजी २८, नरसी मेहताजी २९, नाभाजी ३०, काष्ठाजिह्वा स्वामी ३१, राधास्वीमतकी ३२, निर्भय स्वामी ३२, वजहनसाहब ३३, करीममियां ३४, तथा मीरा बाई ३५, सहजोबाई ३६, दयाबाई ३७, बाबा प्रयागदासजी ३८, इत्यादि॥ महात्माओंकी वाणी शब्द वहुत गूढ हैं. विद्वानोंको भी उनका ठीक २ भावार्थ समझना बडा कठिन प्रतीत होता है. यदि प्रति महात्माका १ भजन आदिभी लिखा जावे तो पुस्तक बडी होजावेगी इस कारण केवल अपनी लघु बुद्धिके अनुसार अपना विचार संतमतपर संक्षेप तथा प्रकट करता हूं. इस पंथका मुख्य कर्त्तव्य तथा मुक्तिके वास्ते सुरतिशब्द भोगको ही प्रधान माना गया है और इसको गुप्त रखनाभी इसका साधन समझा गया है जैसे दूलनसाहब लिखते हैं यथा "दूलन यह मत गुप्त है, प्रगट न करौ बखान। ऐसे राखु छिपाय मन, जस विधवा औधान॥" और पलटूसाहब भी कहते हैं। यथा

" जिन जिन पाया बस्तुको, तिन तिन चले छिपाय।
तिन तिन चले छिपाय, प्रगटमें होय हरक्कट॥"

इत्यादि इसी कारण महात्माओंने साफ २ खोल कर नहीं समझाया है और जहा जहां पर कहभी दिया है यहांपर या तो पश्तो बोली कर दी है या अतिगूढ शब्दमें कहा है जिसका तात्पर्य यह है कि पुस्तकें चाहे जितनी पढी जावें विना गुरूके भेद नहीं मिलता है यथा- "पृथ्वीसे आकाशलौं धावै विना गुरूके भेद न पावै" और इस मार्गका जाननेवाला आमतौरपर बतलाता नहीं फिरता है जब ईश्वरको कृपा होती है तब महात्माओंका सत्संग तथा पुस्तकोंका सत्संग होकर मनमें अधिक रुचि ईश्वरभक्तिमें होती जाती है फिर कोई महात्मा उसे प्रेमी जिज्ञासु जानकर सत्पथमें लगा देता है तथा उपदेश देकर चित्तकी शांति कर देता है गुप्तविद्या होनेसे कोई

कोई उसके अच्छे ज्ञाता होते हैं. एक महात्माका वचन है कि "जो तेरे घट प्रेम है तो कहि कहि न सुनाउ । अंतर्यामी जानिये तेरे घटका भाउ " इसलिये मेरे लेखमें भी यदि गोलमोल अथवा खोल कर साफ २ न समझमें आवे तो कृपया उचित जान कर क्षमा करें और एकाग्रचित्त होकर लेखपर विचार करें और महात्माओंका सत्संग करके भ्रमकी निवृत्ति करके चित्तकी शांति करें.

अब संक्षेप सारांशका वर्णन अपनी बुद्धिके अनुसार करताहूं, जैसा कि अनेक पुस्तकोंके देखनेसे जाना गया है " जो ब्रह्मंडे सोई पिंडे " अर्थात् जैसे ब्रह्मांडकी कक्षा (घेरे) के भीतर स्वर्गादि लोक सूर्यादिक ग्रह तथा नक्षत्र और पृथ्वी सब कुछ है और सूर्यकी प्रभा ब्रह्म कक्षाहीतक रहती है आगे नहीं जाती है इसी प्रकार इस शरीरमें भी नाभिके नीचे पातालादि और नाभिसे ऊपर अन्य ऊपरके लोक तथा सूर्यादिक ग्रह हैं. भ्रूमध्यतक ब्रह्म कक्षा जानना चाहिये. शरीरमें भ्रूमध्यतक पूर्वोक्त ६ चक्र कहे हैं और सातवां चक्र सहस्रदल कमलका सबसे ऊपर बतलाया जा चुका है. महात्माओंने उसके ऊपर ७ स्थानोंका और पता लगाया है. १ स्थान सहस्रदलकमलहीका माना है ॥

गगन दूसरा २ शून्य महाशून्य ३ गुफा ४ सतलोक ५ अलख-लोक ६ अगम लोक ७ इसके आगे ऊपर अनंत महास्वामीका धाम है. सुरतिका स्थान दोनों नेत्रों के बीचमें जो भ्रूमध्यचक्र है वहां है. गुरुके बताये क्रमानुसार अभ्यास करके सुरति जब ऊप-रको शब्दाधार होकर चलने लगे तब किसी समय अवश्य परम धामतक पहुँच सके अपने २ स्थानोंके भिन्न २ शब्द हैं जिनको सुन कर स्थानका ज्ञान होता है तथा मन एकही तरफ लगा हुआ सब झंझटोंसे छूट कर आनंदमय होकर परम सुखका भागी बन जाता है " भ्रुकुटीलौं सब देहमें काल रहा भर पूर बाके ऊपर अगम गति (वह) जन्ममरणसे दूर ॥ " जबतक

चित्त संसारिक कार्योंके चिंतवनसे शांति नहीं पावेगा तब तक शब्दको नहीं सुन सकेगा और जो स्वयम् शब्दाभ्यासी नहीं होगा वह दूसरेको किस प्रकार शब्दाभ्यासी बना सकेगा. जैसे अंधेको अंधा कैसे रास्ता बतला सकता है निर्बंध गुरूकी कृपासे भवबंधनसे छूट सकता है. शब्दरूपी निर्बंधगुरुका सतसंग अर्थात् समागम होना विना ईश्वरकी कृपाके अतिदुस्तर क्या वल्कि असंभव है. विना चित्तकी शांतिके कदापि नहीं संभव है। यह हर घटमें विराजमान होकर सीधे रास्तेका बतलानेवाला है एक सच्चा दृष्टांत मैं अपनी दृष्टिगोचरका लिखता हूं.—में छोटी अवस्थामें अपने द्वितीय नाना लालाटोडरमल (टरूं मल) के साथ सीतापुरसे मिश्रिक नीमसारको जा रहा था उन्होंने १ घोडेवालेका घोडा भाडेपर कर लिया था. वह घोडेवाला भी साथ था सायंकालके समय रास्ता भूल कर एक पलाशादिके जंगल (डंडिया) में पड गया और अंधेरा होगया. वहां पर रास्ता नहीं मिला थोडी २ दूर चारों तरफ जाकर फिर लौट आवें वडे सोचमें होगये कि कहांको जावें. जब थक कर बैठ रहे तो थोडी देरमें एक तरफसे कुत्ते भूँकनेकी आवाजसी कुछ २ मालूम हुई उसी तरफ ध्यान दिया तो मालूम हुआ कि इस तरफ कोई गांव अवश्य ही होगा फिर उसी आवाजके सुननेपर चले जब कुछ दूर चले तो फिर आवाज कुछ जोरकी मालूम हुई और आगे चलनेपर मनुष्यकी आवाज भी कुछ २ मालूम हुई और कुछ अग्नि या दीपकी रोशनी भी मालूम हुई और आगे चल कर १ गांवमें पहुँच गये अर्थात् यहांपर रास्ता बतलानेवाला शब्द ही हुआ ऐसे ही घटके भीतर समझना चाहिये. जिस प्रकार इस ब्रह्मांडके भी अनेक प्रकारके जीव लोकादि हैं इसी प्रकार उस पितामहके अनेक ब्रह्मांड हैं जैसे "प्रभु पूरण ब्रह्म अखंडा जाके रोम रोम ब्रह्मण्डा" ब्रह्मा विष्णु महेश अर्थात् ॐ यह प्रत्येक ब्रह्मांडमें विराजमान हैं और यहांसे ही माया

सम्मिलित हुई है ब्रह्मांडसे ऊपर होनेपर माया रहित अर्थात् तीनों गुणोंसे पार होकर मुक्ति धाममें पहुँच सकता है. वहांपर यह सूर्य चन्द्रादि नहीं हैं वहां माया रहित ब्रह्मका प्रकाशादि आनन्दमयकोश असीम शोभा संपन्न है इस विषयमें अधिक लिखकर पुस्तक बढाना उचित नहीं है अब अपनी सम्मति प्रकट करता हूं कि यदि ईश्वरकी कृपासे ईश्वरकी भक्तिमें चाहना हो तो किसीका जी न दुखावे जीव मात्रपर दया और दीनता और किसीसे वाद विवाद न करे गुरुके बतलाये हुए क्रमका नित्याभ्यास करता रहे और सहनशक्ति बढाने-का अभ्यास करे कम सोना, कम बोलना, कम भोजन करना और रात्रिमें जाग कर भजन सुमिरन करना और प्रेमको बढावे महात्माओंके पास सतसंगमें जाया करे क्योंकि सच्चे सतसंगमें ईश्वरप्रेमका आनन्द अवश्य मिलता है, जैसे विषयी पुरुष एकांतमें बैठकर विषयकी बात परस्पर करते हैं कि अमुक स्त्री बडी सुन्दर है इत्यादि बातें करके बडे आनन्दमें हो जाते हैं और किसी २ पर कामका ऐसा प्रभाव पड जाता है कि धोतीतक खराब हो जाती है अर्थात् स्त्रीके पास नहीं होते हुए भी मैथुनानन्द प्राप्त होगया इसी लिये कहा भी है कि" जैसी प्रीति हराममें, तैसी हरिमें होय।चलो जाय वैकुंठमें,बांह न पकडै कोय" इसी प्रकार सच्चे सतसंगमें भी आनन्दमय होकर अश्रुपात होना रोमां,चका होजाना प्रत्यक्ष ही है जैसे कहा भी है कि सतसंगमें ईश्वर अवश्य ही होता है यथा " नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदये न च। मद्भक्ता यत्र गायंति तत्र तिष्ठामि नारद" अथवा "तद्धाम परमं मम" इस भवसागररूपी समुद्रमें अपनी २ लग्गी लगाकर थाह लगाया करते हैं परंतु जब परमात्माहीकी कृपा होती है तब कुछ थाह मिलती है जैसे १ समुद्रमें केवल १ धार एक तरफसे आकर गिरी हुई है मछ-लियाँ रूपी जीव समुद्रसे उछल कर थोडी दूर ऊपरको गयी फिर समुद्रमें गिर गयीं यदि उस मछलीको उछलतेमें वह ऊपरसे आयी हुई धार मिल जावे तो वह मछली उस धारपर बडी सरलतासे चढकर

जहांसे वह धार आयी है वहां पहुँच सकती है अर्थात् भवसागरसे पार हो सकती है सो अतिदुस्तर है भगवतकी शरणमें सदा बने रहनेसे किसी समय तो अवश्य ही वह अपनी गोदमें उठा लेवेगा क्योंकि भगवत् सच्चे प्रेमीसे प्रसन्न रहते हैं और भक्ति ही प्रिय है किस प्रकारके गुण सुंदरता तथा धनकी कोई आवश्यकता नहीं है यथा- "व्याधस्याचरणं ध्रुवस्य च वयः को वा गजेंद्रे तपः । का जातिर्विदुरस्य यादवपतेरुग्रस्य किं पौरुषम् । किं कुब्जा कमनीय रूपनिपुणा को वा सुदाम्नो धनम् । भक्त्या तुष्यति केवलं नाहि गुणैर्भक्तिप्रियो माधवः" कलियुगमें नामकी महिमा अधिक है यदि थोडी देर भी सधे नाममें जुट जावे तो बडा लाभ है क्योंकि 'सच्चे नामकी तिल वडियाई' अथवा 'कहौं कहां लग नाम बडाई । राम न सकें नाम गुण गाई तथा- किनका एक जस जीव वसावै । ताकी महिमा गनी न जावै ॥' जैसे "सुरति लगै अरु मन लगै, लगैनिरति धुनि ध्यान । चार युगनकी वंदगी, एक पलक परमान" अथवा "तन थिर मन थिर वचन थिर, सुरति निरति थिर होय । कहें कवीर यह पलकको, कलप न पावे लोप" इत्यादि जबतक आतशी शीशेपर सूर्यकी किरण ठीक फिट होकर शुद्धबिंदु नहीं होता तबतक अग्नि प्रकट नहीं हो सकती और जब अग्नि प्रकट होजावे तो पापरूपी ईंधन अधिकसे अधिकको भी जला सकती है। अब प्रश्न यह उठता है कि वह नाम क्या है ? इस विषयको महात्मा- लोग बहुत गोप्य रखते हैं क्योंकि कहा भी है "रहस्यमेतद्देवानां न देयं यस्य कस्यचित्।सुपरीक्षित शिष्याय देयं वत्सरवासिने" तथापि बहुतसे महात्माओंके वचनों द्वारा स्पष्ट प्रकट हो जाता है यहांपर १ शब्द श्रीगुरुनानकदेवजीका लिखा जाता है यथा "जैसे जलमें कमल निरा- लम, मुर्गावी नहिं साना । सुरति शब्द भवसागर तरिये, नानक नाम बखाना" अब ईश्वर जीवकी एकतापर कुछ लिखते हैं ईश्वर सर्वज्ञ है और जीव अल्पज्ञ है, परंतु जब जीव अपने रूपको जान कर ईश्वरमें मिल जाता है तब वह भी सर्वज्ञ हो जाता है इस लिये जो महात्मा

परमात्मामें मिले हुए हैं वह ईश्वररूप हैं और साधुकी महिमा वेद नहीं जान सकता है संतकी महिमा ईश्वरवत् अनंत है अब इसपर यह प्रश्न उठता है कि ईश्वर जो कुछ कर सकता है मनुष्य (जीव) क्यों नहीं कर सकता ? जिसके उत्तरमें १ सामान्य दृष्टान्तवत् लिखते हैं जैसे समुद्रका जल लोटे कलशे इत्यादि बर्तनोंमें भरलेनेसे समुद्रके जलमें और वर्तनके जलमें कोई द्वैत नहीं है अर्थात् ईश्वर जीववत् एकता है परन्तु समुद्रमें जहाज नौका आदि चलाये जाते हैं किन्तु बर्तनके जलमें ऐसा नहीं हो सकता हां जब वह जल समुद्रहीमें मिल जावे तो वहभी समुद्रमें मिलकर समुद्रही होजावेगा। सतगुरुका जानना बडा कठिन है जब उसीकी कृपा होती है तब जान कर उसी रूपमें आप मिलकर द्वैतभाव जाता रहता है यथा "सो जानै जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हैं तुम्हैं हुइ जाई" बाबा मलूकदासका शब्द है कि-

"हमरा सतगुरु विरलै जानै। सुईके नाके सुमेर चलावै, सो यह रूप बखानै॥ की तो जानै दास कबीरा। की हरिनाकसपूता। की तो नामदेव औ नानक की गोरख अवधूता॥ हमरे गुरुकी अद्भुत लीला ना कछु खाय न पीवै। ना वह सोवै ना वह जागै ना वह मरै न जीवै॥ विन तरुवर फलफूल लगावै, सो तौ वाका चेला। छिनमें रूप अनेक धरत है, छिनमें रहै अकेला॥ विन दीपक उजियारा देखै एँडी संमुँद थहावै। चींटीके पग कुञ्जर बाधै जाको गुरू लखावै॥ विन पंखन उडि जाय अकाशै, विन पंखन उडि आवै। सोई शिष्य गुरूका प्यारा सूखे नाव चलावै॥ विन पायन सब जग फिरि आवै सो मेरा गुरुभाई। कहै मलूक ताकी बलिहारी जिन यह जुगत बताई॥"

इसका भेद केवल सन्त महात्माही जान सकते हैं कैसाही विद्वान् अथवा वेदपाठी क्यों न हो परन्तु महात्माओंके शब्दोंका यथार्थ भावार्थ जानना अति दुस्तर तथा असम्भवसा प्रतीत होता है। वेद शास्त्रादिमें ब्रह्माण्डके भीतरका अच्छे प्रकार वर्णन है परन्तु ॐका-रके पार अर्थात् ब्रह्माण्डके पारका पता केवल संत महात्माओंहीने

जाना है, अकथनीय है अतः अब इस लेखको यहांही रोक कर अब कुछ भजनादि जो मनकी तरंगमें बन गये थे उनको लिखकर पुस्तककी समाप्ति की जावेगी ॥

(१)

हमारे गुरु पूरण हैं दातार दयाभाव उपदेश ज्ञान है, जड तम करादियो क्षार । चौरासी लख भवबन्धनसो बांह पकड कियो पार ॥ ईश्वर कृपा परमगुरु पाये चेतो भाग्य हमार । गुप्त भेद क्षणमात्रमें दीन्हो ऐसे परम उदार ॥ जो कछु विनय करूं सो थोडी महिमा अपरंपार । गंगाधर हरि शरणमें आयो चरणकमल उर धार ॥ १ ॥

(२)

गुरु मोहिं ज्ञान कवच पहिरायो । दीनदयाल प्रेमप्रिय भगवन् । सतगुरु दरश करायो ॥ जिज्ञासू मोहिं जान कृपा करि, ज्ञान विवेक पढायो ॥ गुरुसम तत्त्व न दूजो जगमें गुप्तभेद समुझायो ॥ तुम्हरी कृपासों सबही सुलभ है कौन सकै गुण गायो ॥ सब ईश्वरमें ईश्वर सबमें । जिन ढूंढो तिन पायो ॥ गंगाधर हरिशरण गयेते मन आनन्द बढायो ॥

(३)

सतगुरु कृपाल समान जगमें और को दाया करै । भवबन्ध छूटै सहजसों क्षणमात्रमें माया हरै ॥ जो होय जिज्ञासू विमल अरु भाग्यवश गुरु पावही । मन वचन तन सत प्रेमसों श्रद्धासे ध्यान लगावही ॥ सतगुरुप्रसाद सहायसों अनहद अन्तर बाजई । सोहं सहारा चढि चलै जहँ ब्रह्म आप विराजई ॥ निरबन्ध गुरु आशीषसो भवबन्धन निश्चय छूटई । सतगुरु चहैं सोइ होत है सब कर्म बन्धन टूटई ॥ जगमें उदासी हो सही प्रभु भक्ति लौ लागी रहै । मनमें तरंगै शुभ उठैं खल कामना भागी रहै ॥ दर्शन सदा हृदयमें हो प्रत्य-

क्षभी दर्शन करूं । निशदिन इन्द्री सकल वशमें करूं ॥ प्रभु चरणमें दृढ भक्ति हो मेरी न सुध बिसराइये । माया अनन्त महन्तकी विनती कहांलग गाइये ॥ हरि शरण दास दयाल सतगुरु अति कृपा मोपर करी । तब चरण मंगल करण गंगाधर भजें प्रभु हरघडी ॥

(४)

भजाम्यहं सदाशिवं करो कृपा महा प्रभो । ऋषी मुनी सती यती न पावैं पार आपको॥ डमरू डम डमड् डमड् बजावते हो रुद्रजी । तरंग गंग शीसपै विराजमान आपके ॥ चमक दमक चमक दमक महेश चन्द्रभाल है । गलेमें मुण्डमाल औ भुजंग तुंग माल है ॥ रजोगुणी सतोगुणी तमोगुणी स्वभावसे जगत करत जगत धरत जगत हरत प्रभावते ॥ सहस्र पुष्प विष्णु नित्य आपको चढावते दियो है चक्र आपने त्रिलोकके सहायको ॥ गंगाधर प्रभो हृदय विराजिये प्रमोदसे । उमा सहित सदाशिवं नमामि सर्वशक्तिते ॥

(५)

स्वामी तेरी सुधि मोसों बिसरि न जाय । यह वरदान दया करी दीजै विनती करूं बनाय ॥ पलपलमें प्रभु दर्शन पाऊं हृदय बिच रहौ समाय । जग शरीर मन तव चरणनमें दृढतासों लपटाय ॥ नरतन धरि उपदेशहि हित प्रभु भक्तन करत सहाय । निगमागम प्रभु पार न पावत कौन सकै गुण गाय ॥ सर्वशक्ति संपन्न छाँडि प्रभु केहि शरणागत जाय । गंगाधर स्वामिन् करुणामय लीजो अपन बनाय ॥

(६)

दीनबंधु दयालु स्वामी जान जन अपनाइये । सघन वन संसार दुर्गम वसत ठग मोहादि हरदम । फंस गयो मैं कर्म वश प्रभु आय मोहिं बचाइये ॥ मातु पितु सुत अश्व हाथी हैं सभी स्वारथके साथी । आप बिन मेरो कौन भगवन् ताहि माहि बताइये ॥ करि

कृपा जग पीर हर ले भक्ति चरणोंकी मुझे दे। कोटि रवि सम मूर्ति तेरी मोहिं नित्य दिखाइये ॥ मोहादि तमअज्ञानके वश रूप प्रभु तेरो लखै। कस विनय गंगाधर प्रभूसे ज्ञान चक्षु खुलाइये ॥

(७)

भजो मन हरि हरि हरि दिन रैन। हर मायाको पार न पावत ब्रह्मादिक थक गैन। मात पिता दारा सुत भगिनी सकल संपदा हैन ॥ जीवतको सब खेल जगतमो मरे साथको गैन। हरिकी कृपा परलोक बनत है कहत पुरातन बैन ॥ भजनको सुख मन जब तुम पैहो पाडि है न उस बिन चैन। गंगाधर प्रभुको गुण गावत हर घट लागे नैन ॥

(८)

हमारे प्रभु सब दुख दूर करो। अजामीलके कर्म विदित जग सुत प्रभु नाम धरो ॥ अंत समय सुत नाम लेनसों विन श्रम आप तरो ॥ कष्ट देन प्रहलाद पिताने बहुतक यतन करो। हरिणाकुश वध कष्ट छुडावन नरसिंहरूप धरो ॥ ग्राह जलमें गजराजहिं पकडो गज प्रभु याद करो। विना योग जप तपके कीन्हें क्षणमें कष्ट हरो ॥ भक्त अनेक दयानिधि तारे जिन सत प्रेम करो। सकल मनोरथ पूरण कीन्हे तब भंडार भरो ॥ भक्ति अचल प्रभु दर्शन पाऊं दीजै ज्ञान खरो। गंगाधर प्रभु विनती सुनिये काहे देर करो ॥

(९)

विनय प्रभु मोरी सुन लीजै। कृपा करि दरशन नित दीजै ॥ नाम तेरो घट घट वासी। अजन्मा अज रहै अविनासी ॥ हृदय मन मोह अंधियारा। नजर कैसे आवै प्यारा ॥ होय जब शुद्ध मन भाई। लखूं तब प्रभुकी प्रभुताई ॥ चित्त ब्रह्मांड घट लाऊं। प्रकाश आनंदसे पाऊं ॥ रहै चरणोंमें चित मेरा। नाम हरदम जपूं तेरा ॥ दास निज जान गंगाधर। सुरति जागी रहै अन्तर ॥

(१०)

ऐसो देखो हम जगमाहिं राम लक्षमिनियां नाच रही । जाकी चितवनसों जग मोहै । नाचत थिरिक थिरिक कर सोहै । राम पैंजनियां बाज रही ॥ जाके कारण घरमां लडियत । प्यारी बिन कछु चैन न पडियत । राम सब दुनियां साज रही ॥ देश देश माया भरमावै । जाके बिन कछु बन नहिं आवै । राम सब बतियां लाग रहीं ॥ गंगाधर प्रभुध्यान लगावै हरि कृपासो सब सुख पावै । राम सूरतियां लाग रहीं ॥

(११)

जब उसकी मरजी होवैगी तब ही सब कुछ होजावैगा । हम उससे सुरति लगावैंगे वह हमसे मिलने आवैगा । फिर प्रेमकी बातैं होवैंगी सब रंजु अलस मिट जावैगा । हम उसको गले लगावैंगे वह हमको गले लगावैगा ॥ चित बाहरसे हट जावैगा तब अंतरपट खुल जावैगा । है गंगाधर प्रभुसे बिनती स्वामी सब पार लगावैगा ॥

(१२)

बंसी धुनिसों बजाय चकित कीन्ह गोरी । मोहनकी रसिक तान गोपिनके पडी कान । खान पान राग पान बिसरि सब गयोरी ॥ पहुंची नँदलाल पास हियकी बाढी हुलास कंठसों लगाय कान्ह रहस मिल कियो री ॥ नाचत ता थेइ थेइ नूपुर झुनकार लेइ कामहू लजाय गयो हर्ष अति भयो री ॥ जान निज करौ सहाय गंगाधर उर बसाय भक्तन आनन्द कंद वेदहू कह्यो री ॥

(१३)

देखो वहां ये जाके आनन्द आ रहा है ॥ श्रीयमुनाजीके तटपर कैसी बहार छाई । वृक्षोंपे मोर पीपहा बोली सुना रहा है ॥ सावियां व श्याम श्यामा बैठे कदमकी छैयां । मन मस्त होरही हैं कोई तान गा रहा है ॥ मृदंग झांझ वीणा कोई बजा रही हैं । नँदलाल तान

स्वरसे वंसी वजा रहा है ॥ झूला कदममें डारो सखियां सबै लुभानी। अंगुलीका कर ईशारा मोहन बुला रहा है ॥ झूलेमें राधिकाको आनन्दसे विठाया। प्यारीको नंदनंदन झूला झुला रहा है ॥ कैसी अनूप जोडी यह मन भावनी है ॥ प्रकाशरूप तेरा नैनों समा रहा है ॥ जापर करी कृपा तुम ऐ दीनके दयाला। सब भुक्ति मुक्ति पाई जग नाम छा रहा है ॥ सब विघ्न दूर होवैं दर्शन सदैव पाऊं। गंगाधर सदैव अर्जी अपनी सुना रहा है ॥

(१४)

दर्शन दीजै हो महाराज हरघट घटमें रहनेवाले। कायागढ अकाशमठ साजा अनहद शंखनाद धुनिबाजा हृदय अष्ट कमल आरूढ तहां आनंद मनाने वाले ॥ अपने दोऊ मूंदकर कान ज्ञान सुनै सुरीली तान। भ्रकुटी ऊपर पहुंचै प्रान काया कँवल खिलाने वाले ॥ चक्कर ब्रह्मका उज्वल रंग वहांपर ध्यान धरै अर्द्धंग उलटकरदेखै दोऊ नैन फंद मायासे छुडानेवाले ॥ मैं विनय करूं महाराज हमारे सकल सम्हारो काज। गंगाधर सेवक निजजान कृपा करि दशरन दिखाने वाले ॥

(१५)

चलोगे दुनियांसे यार जिसदम न तुम किसीके न कुछ तुम्हारा। क्यों नींद गफलतमें सोरहेहो यह उम्र अपनीको खोरहेहो। जो वक्त आयेगा कूंच जिसदम विवश रहोगे चलै न चारा ॥ पिदर मदर औ बहिन विरादर। निज मतलब करते सब आदर। खूब मुहव्वतमें फंसरहे क्यों करेगा कोई नहीं सहारा ॥ जर जमीन जन काम न आवै। क्यों तृष्णा अधिक बढावै। चले न कुछ भी साथ तुम्हारे यह जिन्दा तनका जटल है सारा ॥ जो कुछ कि दुनियाँमें है दिखाता फना सभी है वेद बताता। यही है बेहतर हक पहिचानो जो सब खल्कतका अधारा ॥ दिल यकसू जब करै प्यारे। तृष्णा तमा नफ्सको मारे। सुनैगा अनहदका शब्द अंदर नजर

पडैंगे फलक सितारा ॥ उसी नूरका जहूर हो जब ख्वाहिश सारी दूर रहै तब । मुक्ती पाओगे दुनियांसे गंगाधर प्रभु करैं सहारा ॥

(१६)

श्रीस्वामीका उपदेश है इसे वृथा न कोई जानो । संतोष दया सतभाषण, रक्षा शरीर सुखआसन मन घट ब्रह्मांड पहुंचा कर प्रकाश वहां पहिचानो ॥ पथ कठिन योग तप साधन है सरल प्रेम आराधन विश्वास वचनपर करके निश्चय यह मनमें ठानो ॥ मन मस्तक अन्दर लावै जब निश्चित ध्यान लगावै; तब प्रभु प्रकाश दिखलावै सो जियमें सांची मानो ॥ मत भेदु नहीं झगडेमें ईश्वर तो है घटघटमें निजस्वारथसे नहिं पाओ क्यों लडते हो नादानो ॥ गंगाधर स्वामी ध्यावै मनमें आनन्द बढावै, जो अनुचित शब्द कहा हो तो क्षमा करो विद्वानो ॥

(१७)

अरे मन सोच ले जगमें भजन बिन क्यों भटकता है । पिता माता औ सुत नारी, वृथा इनमें अटकता है । नहीं है नित्य जड माया, जहां लों दृष्टिमें आवे । मोहब्बत जडसे चेतनकी, पडा फंदा लटकता है ॥ जो कहता है मेरी जाया, बली राजा मैं कहलाया । यह चोलाभी नहीं साथी, निकल कर जब सटकता है ॥ मरे चोलेसे डर करते, न कोई पासतक आवे । चलन दुनियांका है ऐसा, जिसे सुन दिल खटकता है । मूंद मुंह कान आंखोंको, प्रकाश उसका नजर आवे । सुनै धर ध्यान गंगाधर कि, ज्यों बादल कडकता है ॥

(१८)

राम भजन मन क्यों विसरावै दिवस यक काल आवेगा । जितनी प्रीति करै विषयनसों उतनोहीं दुख पावेगा ॥ जिन जिनको अपनो कर मानत कोई काम न आवेगा ॥ जब काल आवेगा ॥ ना घर तोडै किला न फोडै ना वह सेंध लगावेगा । आवत काल लखै ना कोई ।

तुझे पकड लेजावेगा॥ जब काल आवेगा ॥ तेरे बिन माटी हो काया गाडे या फूंक जलावेगा । माटीमें भये भूत आन कर कोई पास न आवेगा ॥ जब काल आवेगा ॥ सत्य ज्ञान पहिले जो पावे फिर काहे पछितावेगा । गंगाधर प्रभु चरण कमल भज वाहीमें मिल जावेगा ॥ जब काल आवेगा ॥

(१९)

सुनोजी मन ही सकल प्रधान । मनही चहत खेल खेलनको कामी बनत जवान । मनही चिंता अधिक व्यापै मन किलोल सुख जान ॥ जितने कर्म शुभाशुभ लखियत सबको मन दीवान । अंत समय मन जहां लगत है तहँ तैं होत पयान ॥ तीव्र चाल चंचलता मनके कोई न होत समान । जाको मन कछु थिरता पावै सोई चतुर सुजान ॥ यतन नियम प्रभु गुरु कृपासों ले आपन पहिचान । विनय करत हौं मैं गंगाधर चेतो मन अज्ञान ॥

(२०)

समझ मन जग स्वप्नेकी बात । बाल भये जग खेलन लागे मांग मांग कर खात । तरुण भये संगति कामिनसों तिरियन संग अठिलात ॥ बूढे भये दुखित चितासों शिथिल भये सब गात । घरके कहत मरै कब बूढा काम करत अन खात॥ आयो काल छूट गयी काया साथ कछू नहीं जात । याही विधि सब लोकन माहीं पायो तन छुटि जात ॥ स्वप्ना देख सोय कर जागे समुझि समुझि पछितात । कहत रीति गंगाधर जगकी यक आवत इक जात ॥

(२१)

सुन्दर त्रिया कहत बालमसों अरे पिया काहे बनत वैरागी । सो अरे पिया काहे बनत वैरागी ॥ काम क्रोध मद लोभ न त्यागा

अरु तृष्णा नहिं त्यागी। चंचल मन थिर करि नहिं पायो सकल रागके रागी॥ घरकी माया व्यर्थ गवाँई कौडी न मिलिहै मांगी। हरि विन कोऊ काम न आवत जब हंसा घर त्यागी॥ अरे पिया०॥

दोहा

सुंदरि त्रिय कहि कंतसों, समझावहु यक बात। घर छांडे जो घर घर फिरिहौ, तो क्यों छांडे जात॥ जब समझाय कही प्रिय सुंदरि सोवत बुद्धी जागी। तब अज्ञान दूर भयो क्षणमां ज्ञान भयो अनुरागी॥ कंठ लगाय कहें प्रिय बालम तू तिरिया बडभागी। गंगाधर प्रभु चरण कमललों अब हमार लौ लागी॥ अरे०॥

(२२)

ध्यावो राम सियाको निशिदिन तोरी घटत उमरिया ना। शक्ती रूप सिया जगदम्बा व्यापक राम पिता सब मां। पावो गुणनसे प्रभुको नाहीं क्या अभिमान करे मनमां॥ मारो अहंकार रावण को प्रभु है गर्वप्रहरियाना। यारो ज्ञानको दीपक घटमाँ होवै उदय उजरिया ना॥ गोलाकार तेजके भीतर देखो मूर्ति सँवरिया ना। लागै मन शोभामें प्रभकी बाजे सुघारै बँसुरिया ना। पावै गुरूकृपासों मारग पहुंचै महल अटरिया ना। गंगाधर स्वामी अपनावो देखो दया नजरिया ना॥

(२३)

दरश मोहिं दीजै नन्द कुमार। जाके दर्शन हित शिव शंकर ठाढे नन्द दुवार। अलख सुनत लाई नन्दरानी भर मुतियनके थार॥ माया मोती हमें नहिं चहिये योगी कहत पुकार। अपने ललनको दरश दिखादे है जगको करतार॥ ललन गोद ले यसुमत मैया

आई निज गृह द्वार । दर्शन कर हर्षित मन योगी कीनों नृत्य-विहार ॥ पारब्रह्म सर्वज्ञ पितामह मैया ललन तुम्हार । गंगाधर प्रभुको गुण गावत मोरे प्राणअधार ॥ दरश मोहिं दीजै०॥

(२४)

तेरी शरणमें आया हूं शिव वामअंगिनी । भक्तोंकी सुखद मात हो दुष्टोंको मर्दनी ॥ घट घटमें व्यापती हो शक्तिरूपसे सदा । सेवक निहाल कारिणी गिरिराज नन्दनी ॥ तेरी कृपा दयासे सभी पावते हैं सुःख । बुद्धी प्रकाश कारिणी जडतम निकन्दनी ॥ हृदयमें वास गंगाधरके सदा करो । विनती करूं कहां लों देवनकी वन्दनी ॥

(२५)

अपनी प्रभुता ये आप निहारो। नाथ मोहिं विनश्रम पार उतारो॥ नाथ मोहिं ०॥ भवसागर जल अगम बहत है। मोरी नैया पडी मझधारो ॥ नाथ मोहिं ०॥ तुम विन कौन खिवैया जगतमें । सब स्वारथको वरियारो ॥ नाथ मोहिं० ॥ दीन अनेक नाथ तुम तारे । गुण अवगुण न विचारो॥ नाथ मोहिं विन श्रम पार उतारो ॥ गंगा-धर प्रभु चरण शरणमें । बल केवल है तिहारो ॥ नाथ मोहि विन श्रम पार उतारो ॥

(२६)

हरिसों नेह लगाया मजा प्रह्लादने पाया । घरसे निकल चले खेल-नको कुम्हरी गृह तब आया । बिल्ली बाल बचे अग्नीसें देख हरीकी माया । वचन कुम्हरीने सुनाया ॥ हरिसों नेह० ॥ अद्भुत माया जान प्रभूकी मन आनन्द बढाया । विद्या पढन जात पंडितघर राम-हिराम सुनाया । देख पण्डित झुंझलाय ॥ हरिसों नेह० ॥ हरिणाकुश यह जान पुत्रको बहुत भांति समुझाया । असुर बली राजा मैं जगमें

मम प्रताप बहु छाया ॥ राम तोहिं कौन बताया ॥ हरिसों नेह ० ॥ उत्तर देत पिताको अपने जग है जिसकी माया । सो सचराचर सबमें व्यापक रहिता गुप्त समाया ॥ भेद योगीजन पाया । हरिसों नेह० ॥ असुर कहै प्रभु नामहि छांडहु बहुत भांति डरवाया । गिरि-सों पतन अग्निसों जारण खम्भ माहिं बंधवाया ॥ हाथले खड्ग दिखाया ॥ हरिसों नेह० ॥ राम नामकी प्रभुता ऐसी नेकौ कष्ट न पाया । तेरो राम कहां है बालक मम सन्मुख नहिं आया । खम्भ देख थर्राया ॥ हरिसों नेह० ॥ खम्भ फाड नरसिंहरूप धरि असुर उदर विदराया ॥ गंगाधर सब देव हर्ष मन दीनबन्धु यश गाया । पुष्प ऊपर बर्षाया ॥ हरिसों नेह लगाया० ॥

(२७)

जब छोड तन चलूं मैं तेराही ध्यान होवे ॥ विनती यही हमारी सुन लीजिये मुरारी । वोही गरुड सवारी । तेराही ध्यान होवे ॥ अन्तर पवित्र घट हो । तिरवेनीजीका तट हो । मनमें भी तेरी रट हो । तेरा ही ध्यान होवे ॥ घन घोर शब्द गाजे अनहद तरंग बाजे ॥ प्रकाश भी विराजै । तेरा ही ध्यान होवे ॥ मन ओमुकी रटन हो आनन्द में मगन हो ॥ प्रभुचरणमें लग्न हो तेरा ही ध्यान होवे ॥ मै भाव सब मिटा हो धुनि शब्दमें जुटा हो । मायासे चित हटा हो । तेरा ध्यान होवे ॥ इति श्री ॐ ।

अब इन भजनोंकी यहां समाप्ति करके कुछ थोडासा लेख और लिखा जाता है, वह यह है कि यदि कोई यह प्रश्न करे कि इसकी क्रिया स्पष्ट रूपसे नहीं बतलायी गयी सो यह बात यथार्थमें सत्य है परंतु विचारपूर्वक कई बार देखनेसे कुछ कुछ क्रिया अवश्य ही समझ सकेंगे लेकिन संत महात्माओंके सतसंग और उनके उपदेशानुसार अभ्यास

करनेसे शनैः शनैः पूर्ण लाभ उठा सकते हैं। विशेषतया निचोड यह (तत्त्वकी बात) है कि काम करते हुए भी किसीमें लिप्त न होना और हर प्रकारके सुखदुःखकी चिंता जिस समय एकदम सब दूर होकर चित्त शांत शुद्ध होकर ईश्वरके ध्यानमें जुटेगा उस समय वह जीव अवश्यमेव ईश्वरमें मिलकर ईश्वररूप ही होकर द्वैतभावका पताही नहीं रहेगा स्वयम् सच्चिदानन्द । सच्चिदानन्दरूप ही होजावेगा और जो मायाकृत दुःखसुखकी लहरोंमें गोता खाता रहेगा वह अनेक जन्म भी बीत जानेपर जन्म मरणरूपी दुख भवसागरसे पार कदापि नहीं हो सकेगा । जैसे एक तरफ अग्नि और दूसरी तरफ बरफकी स्थिति है और बीचमें जो वस्तु रक्खी है यदि अग्निकी तरफ हटायी जावे तो वह वस्तु अवश्यमेव गर्म होजावेगी और अधिक समीप होनेपर अग्नि वत् ही होजावेगी और यदि बरफकी तरफ हटायी जावे तो वह वस्तु अवश्यमेव ठंढी हो जावेगी इसी प्रकार ईश्वर और मायाका मध्य जानना चाहिये अंतिम सम्मति और मैं अपने विचारानुसार लिखताहूं कि जो महाशय इसके सीखने योग्य हों अथवा जिनकी विशेष रुचि हो वह महात्माके बताये हुए क्रमसे नित्य अभ्यास किया करें, क्योंकि जो विशेष वक्ता रहता है वह करता कुछ नहीं रास्ता (पंथ) का नाम लेनेहीसे स्थानपर कदापि नहीं पहुँच सकते पंथ चलनेहीसे स्थान निकट आता जाता है जैसा अधिक चलनेवाला होगा उतनीही जल्दी अभीष्ट स्थानपर पहुँच सकता है यदि मध्यहीमें रुक जावे तो वहां ही रह जावेगा । दूसरी बात यह भी है कि बहुतसे मनुष्य ऐसा भी कहा करते हैं कि मुझे अवकाश ही नहीं मिलता अथवा मैं गवर्नमेंट आदिका मुलाजिम (नौकर) हूं मुझे अवकाश कैसे मिल सकता है ? प्रिय महाशयो जब आपको एक तुच्छ कामके वास्ते फौरन ही

अवकाश मिल सकता है वह यह है कि आप चाहे जैसी कड़ी नौकरीपर नौकर हों और काम कर रहे हों उस समय तुमको पाखाना (टट्टी) जानेकी आवश्यक्तता हो तो तुमको फौरन छुट्टी मिल सकती है तो क्या रात्रिके समय जब कि सोनेके सिवाय कोई काम नहीं करते हो उस समय यदि चाहो तो क्या थोडासाभी समय भजन सुमिरनके वास्ते नहीं निकाल सक्ते हो ? अवश्य निकाल सकते हो, उस लिये सुस्तीको दूर करके पुरुषार्थके वास्ते अवश्य जागना चाहिये. जैसे मन बराबर जागता रहता है यह शांति पाकर जब सोजावे और सुरति जाग जावे तब कार्यकी सिद्धि होना संभव है.

अब एक शब्द निर्भयस्वामीका और एक शब्द यारी साहबका लिखकर पुस्तककी समाप्ति करते हैं.

निर्भय स्वामीका वचन--

हमें ना सूझे अजपासा कोई जाप । ना आसन चाहिये ना माला हृदयकमलमें हो उजियाला । स्वासामें मनुआ रम जावे रहिजाय आपुहि आप ॥ महा काशक बाहर भीतर अखंड एकही जाप । ध्यानकी ओट ज्ञानसे परखो अनहद धुनिका अलाप ॥ चाहे बन बन हेरत डोलो चाहे वेद पुराण टटोलो । नेम करो चाहे व्रत राखोबैठे पुण्य औ पाप ॥ निर्भय नानक सुंदर दादू कबीर तुलसीदास । बाहर भीतर आते जाते अंत हुए गर गाप ॥

शब्द यारीसाहबका ।

राम रमझनी यारी जीवके ॥

घटमें प्रान अपान दुवाई । अरध उरध आवे अरु जाई ॥

लैके प्रान अपान मिलावे । वाही वचनतें गगन गर जावै ॥

गरजै गगन जो दामिन दमकै। मुक्ताहल रिमझिम तहँ बरसै॥
वह मुक्तामहँ सुरति परोवै। सुरति शब्द मिल मानिक होवै॥
मानिक ज्योति बहुत उजियारा। कह यारी सोइ सिरजन हारा॥
साहब सिरजनहार गुसाईं। जामें हम सोईं हम माहीं॥
जैसे कुंभ नीर बिच भरिया। बाहर भीतर खारिक दरिया॥
उठितरंग तहँ मानिक मोती। कोटिन चंद सूरकै ज्योती॥
एक किरिनका सकल पसारा। अगम पुरुष सब कीन्ह नियारा॥
उलटि किरिन जब सूर समानी। तब आपनि गति आपहि जानी॥
कह यारी कोइ अचरन दूजा। आपुहि ठाकुर आपुहि पूजा॥
पूजा सत्त पुरुषका कीजै। आपा मेटि चरण चित दीजै॥
उनमुनि रहनि सकलको त्यागी। नवधा प्रीति बिरह बैरागी॥
बिनु वैराग भेद नहिं पावै। केतो पढि पढि रचि रचि गावै॥

इति अध्यात्मविनोद समाप्त।

पुस्तकें मिलने के स्थान

१) खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
खेतवाडी, मुंबई - ४०० ००४.

२) खेमराज श्रीकृष्णदास,
६६, हडपसर इण्डस्ट्रिअल इस्टेट
पुणे - ४११ ०१३.

३) गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
व बुक डिपो,
अहिल्याबाई चौक, कल्याण
(जि. ठाणे - महाराष्ट्र)

४) खेमराज श्रीकृष्णदास,
चौक - वाराणसी (उ.प्र.)

मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

